नित्य नियम पूजा

(नित्य नियम पूजा)

Topic	--	Page#
नवकार (णमोकार) मंत्र	-	3
स्तुति : तुम तरणतारण	-	4
दर्शन पाठ(तुम निरखत)	-	5
जलाभिषेक पाठ	-	6
विनयपाठ	-	8
मंगलपाठ	-	9
भजन : मैं थाने पूजन आयो	-	9
पूजा विधि प्रारम्भ	-	10
स्वस्ति (मंगल)	-	12
चतुर्विंशति तीर्थंकर स्वस्ति मंगल विधान	-	12
अथ परमर्षि स्वस्ति मंगल विधान	-	13
समुच्चय पूजा Samucchay	-	14
श्री देव-शास्त्र-गुरु पूजा(कविश्री युगलजी)	-	18
अथ देव-शास्त्र-गुरु पूजा	-	24
श्री पार्श्वनाथ-जिन पूजा	-	28
श्री पार्श्वनाथ-जिन पूजा(‘पुष्पेन्दु’)	-	33
श्री अहिच्छत्र-पार्श्वनाथ-जिन पूजा	-	37
श्री महावीर-जिन पूजा (श्री वीर महा-अतिवीर)	-	43
अर्घ्य	-	47
समुच्चय महार्घ्य	-	48
शांति-पाठ	-	50
विसर्जन-पाठ	-	50
स्तुति (प्रभु पतित पावन)	-	51
स्तुति : मैं तुम चरण-कमल गुण गाय	-	52
आरती श्री पार्श्वनाथ जी	-	53
आरती श्री वर्द्धमान स्वामी	-	53

नवकार (णमोकार) मंत्र

णमो अरिहंताणं
णमो सिद्धाणं
णमो आयरियाणं
णमो उवज्झायाणं
णमो लोए सव्व साहूणं

[एसोपंचणमोक्कारो, सव्वपावप्पणासणो मंगला
णं च सव्वेसिं, पडमम हवई मंगलं]

स्तुति : तुम तरणतारण

तुम तरण-तारण भव-नि-वारण, भविक-मन आ-नंदनो | श्री नाभि-नंदन जगत-वंदन, आदि-नाथ नि-रंजनो ||१||
तुम आदि-नाथ अना-दि सेऊँ, सेय पद-पूजा करूँ | कैलाश-गिरि पर ऋषभ-जिन-वर, पद-कमल हिर-दै धरूँ |२|
तुम अजित-नाथ अजीत जीते, अष्ट-कर्म महा-बली | यह विरद सुन-कर शरण आयो, कृपा कीज्यो नाथ-जी ||३||
तुम चंद्र-वदन सु चंद्र-लच्छन, चंद्र-पुरी पर-मेश्वरो | महा-सेन-नंदन जगत-वंदन, चंद्र-नाथ जि-नेश्वरो ||४||
तुम शांति पांच-कल्याण पूजूं, शुद्ध-मन-वच काय जू | दुर्भिक्ष चोरी पाप-नाशन, विघन जाय पलाय जू ||५||
तुम बाल-ब्रह्म विवेक-सागर, भव्य-कमल वि-काशनो | श्री नेमि-नाथ पवित्र दिनकर, पाप-तिमिर विनाशनो ||६||
जिन तजी राजुल राज-कन्या, काम-सेन्या वश करी | चारित्र-रथ चढ़ भये दुलहा, जाय शिव-रमणी वरी ||७||
कंदर्प-दर्प सु सर्प-लच्छन, कमठ-शठ निर्मद कियो | अश्वसेन-नंदन जगत-वंदन, सकल-संघ मंगल कियो ||८||
जिन-धरी बालक-पणे दीक्षा, कमठ-मान विदार के | श्री-पार्श्वनाथ-जिनेंद के पद, मैं नमूं सिर-धार के ||९||
तुम कर्म-घाता मोक्ष-दाता, दीन जानि दया करो | सिद्धार्थ-नंदन जगत-वंदन, महावीर जिनेश्वरो ||१०||
छत्र-तीन सोहें सुर-नर मोहें, वीनती अब धारिये | कर जो-ड़ि सेवक वीनवे प्रभु, आवा-गमन नि-वारिये ||११||
अब होउ भव-भव स्वामि मेरे, मैं सदा सेवक रहूं | कर जोड़ यो वरदान माँगूँ, मोक्ष-फल जावत लहूँ ||१२||
जो एक माँहीं एक राजे, एक माँहि अने-कनो | इक-अनेक की नहीं संख्या, नमूँ सिद्ध नि-रंजनो ||१३||

दर्शन पाठ (तुम निरखत)

तुम निर-खत मुझ-को मिली, मेरी सम्पत्ति आज | कहाँ चक्र-वर्ति-संपदा, कहाँ स्वर्ग-साम्राज ||१||
तुम वंदत जिन-देवजी, नित-नव मंगल होय | विघ्न-कोटि तत-छिन टरैं, लहहिं सुजस सब लोय ||२||
तुम जाने बिन नाथ-जी, एक श्वास के माँहि | जन्म-मरण अठ-दस करयो, साता पाई नाहिं ||३||
आप बिना पूजत लहे, दु:ख नरक के बीच | भूख-प्यास पशु-गति सही, कर्यो नि-रादर नीच ||४||
नाम उ-चारत सुख लहे, दर्शन-सों अघ जाय | पूजत पावे देव-पद, ऐसे हैं जिन-राय ||५||
वंदत हूँ जिन-राज मैं, धर उर समता भाव | तन धन-जन-जग-जालतें, धर विरागता भाव ||६||
सुनो अरज हे नाथ-जी! त्रि-भुवन के आधार | दुष्ट-कर्म का नाश कर, वेगि करो उद्धार ||७||
जाँचत हूँ मैं आपसों, मेरे जिय के माँहिं | राग-द्वेष की कल्पना, कबहू उपजे नाहिं ||८||
अति अद्भुत प्रभुता लखी, वीत-रागता माँहिं | विमुख होहिं ते दु:ख लहें, सन्मुख सुखी लखाहिं ||९||
कल-मल को-टिक नहिं रहें, निर-खत ही जिनदेव | ज्यों रवि ऊगत जगत में, हरे तिमिर स्वय-मेव ||१०||
पर-माणु – पुद्गल-तणी, पर-मातम – संयोग | भई पूज्य सब लोक में, हरे जन्म का रोग ||११||
कोटि-जन्म में कर्म जो, बाँधे हुते अनंत | ते तुम छवि वि-लो-कते, छिन में हो-वहिं अंत ||१२||
आन नृपति किरपा करे, तब कछु दे धन-धान | तुम प्रभु अपने भक्त को, करल्यो आप-समान ||१३||
यंत्र-मंत्र मणि-औषधि, विषहर राखत प्रान | त्यों जिन-छवि सब भ्रम हरे, करे सर्व-परधान ||१४||
त्रिभुव-न-पति हो ताहि ते, छत्र विरा-जें तीन | सुर-पति-नाग-नरेश-पद, रहें चरन-आधीन ||१५||
भवि निरखत भव आपनो, तुव भामंडल बीच | भ्रम मेटे समता गहे, नाहिं सहे गति नीच ||१६||
दोई ओर ढोरत अमर, चौंसठ-चमर सफेद | निर-खत भविजन का हरें, भव अनेक का खेद ||१७||
तरु-अशोक तुव हरत है, भवि-जीवन का शोक | आ-कुलता-कुल मेटिके, करैं निरा-कुल लोक ||१८||
अंतर-बाहिर-परि-ग्रहन, त्यागा सकल समाज | सिंहा-सन पर रहत है, अंत-रीक्ष जिन-राज ||१९||
जीत भई रिपु-मोह तें, यश सूचत है तास | देव-दुन्दु-भिन के सदा, बाजे बजें अकाश ||२०||
बिन-अक्षर इच्छा-रहित, रुचिर दिव्य-ध्वनि होय | सुर-नर-पशु समझें सबै, संशय रहे न कोय ||२१||
बर-सत सुर-तरु के कुसुम, गुंजत अलि चहुँ ओर | फैलत सुजस सु-वासना, हरषत भवि सब ठौर ||२२||
समुद्र बाघ अरु रोग अहि, अर्गल-बंध संग्राम | विघ्न-विषम सबही टरैं, सुमरत ही जिन-नाम ||२३||
श्रीपाल चंडाल पुनि, अञ्जन भील-कुमार | हाथी हरि अरि सब तरे, आज हमारी बार ||२४||
'बुध-जन' यह विनती करे, हाथ जोड़ सिर नाय | जबलौं शिव नहिं होय तुव-भक्ति हृदय अधि-काय ||२५||

जलाभिषेक पाठ

जय-जय भगवंते सदा, मंगल-मूल महान | वीतराग सर्वज्ञ प्रभु, नमौं जोरि जुग-पान ||

श्री जिन! जग में ऐसो को बुधवंत जू | जो तुम गुण-वरननि करि पावे अंत जू ||
इंद्रादिक सुर चार ज्ञानधारी मुनी | कहि न सकें तुम गुणगण हे! त्रिभुवन-धनी ||
अनुपम अमित तुम गुणनि-वारिधि ज्यों अलोकाकाश है | किमि धरें हम उर कोष में सो अकथ गुण-मणिराश है ||
पै निज-प्रयोजन सिद्धि की तुम नाम में ही शक्ति है | यो चित्त में सरधान यातें नाम ही में भक्ति है ||१||

ज्ञानावरणी दर्शन-आवरणी भने | कर्म मोहनी अंतराय चारों हने ||
लोकालोक विलोक्यो केवलज्ञान में | इंद्रादिक के मुकुट नये सुरथान में ||
तब इन्द्र जान्यो अवधितें उठि सुरन-युत वंदत भयो | तुम पुन्य को प्रेर्यौ हरी ह्वै मुदित धनपतिसों कह्यो ||
अब वेगि जाय रचो समवसृति सफल सुरपद को करो | साक्षात श्रीअरिहंत के दर्शन करो कल्मष हरो ||२||

ऐसे वचन सुने सुरपति के धनपति | चलि आयो तत्काल मोद धारे अती ||
वीतराग-छवि देख शब्द जय जय चयो | दे प्रदच्छिना बार-बार वंदत भयो ||
अति भक्ति-भीनो नम्रचित ह्वै समवसरण रच्यो सही | ताकी अनूपम शुभ-गती को कहन समरथ कोउ नहीं ||
प्राकार तोरण सभामंडप कनक मणिमय छाजहीं | नग-जड़ित गंधकुटी मनोहर मध्यभाग विराजहीं ||३||

सिंहासन ता-मध्य बन्यो अद्भुत दिपै | ता पर वारिज रच्यो प्रभा दिनकर छिपै ||
तीन छत्र सिर शोभित चौंसठ चमरजी | महा भक्तियुत ढोरत हैं तहाँ अमरजी ||
प्रभु तरन-तारन कमल ऊपर अंतरीक्ष विराजिया | यह वीतराग दशा प्रतच्छ विलोकि भविजन सुख लिया ||
मुनि आदि द्वादश सभा के भवि जीव मस्तक नाय के | बहुभाँति बारंबार पूजें नमें गुण-गण गाय के ||४||

परमौदारिक दिव्य देह पावन सही | क्षुधा तृषा चिंता भय गद दूषण नहीं ||
जन्म जरा मृति अरति शोक विस्मय नसे | राग रोष निद्रा मद मोह सबै खसे ||
श्रम बिना श्रम-जल रहित पावन अमल ज्योति-स्वरूपजी | शरणागतनि की अशुचिता हरि करत विमल अनूपजी ||
ऐसे प्रभु की शांति-मुद्रा को न्हवन जलतें करें (3) | 'जस' भक्तिवश मन उक्ति तें, हम भानु ढिग दीपक धरें ||५||

तुम तो सहज पवित्र यही निश्चय भयो | तुम पवित्रता-हेत नहीं मज्जन ठयो ||
मैं मलीन रागादिक मलतें ह्वे रह्यो | महा मलिन तन में वसु-विधि-वश दु:ख सह्यो ||
बीत्यो अनंतो काल यह मेरी अशुचिता ना गई | तिस अशुचिता-हर एक तुम ही भरहु वाँछा चित ठई ||
अब अष्टकर्म विनाश सब मल रोष-रागादिक हरो | तनरूप कारा-गेह तें उद्धार शिव-वासा करो ||६||

मैं जानत तुम अष्टकर्म हनि शिव गये | आवागमन-विमुक्त राग-वर्जित भये ||
पर तथापि मेरो मनोरथ पूरत सही | नय-प्रमान तें जानि महा साता लही ||
पापाचरण-तजि न्हवन करता चित्त मैं ऐसे धरूँ | साक्षात श्रीअरिहंत का मानो न्हवन परसन करूँ ||
ऐसे विमल परिणाम होते अशुभ नसि शुभबंध तें | विधि अशुभ-नसि शुभबंध तें ह्वे शर्म सब विधि तास तें ||७||

पावन मेरे नयन भये तुम दरस तें | पावन पाणि भये तुम चरननि परस तें ||
पावन मन ह्वै गयो तिहारे ध्यान तें | पावन रसना मानी तुम गुण-गान तें ||
पावन भई परजाय मेरी भयो मैं पूरण धनी | मैं शक्तिपूर्वक भक्ति कीनी, पूर्ण-भक्ति नहीं बनी ||
धनि धन्य ते बड़भागि भवि तिन नींव शिव-घर की धरी | वर क्षीरसागर आदि जल मणिकुंभ भर भक्ती करी ||८||

विघन-सघन-वन-दाहन दहन प्रचंड हो | मोह-महा-तम-दलन प्रबल मारतंड हो ||
ब्रह्मा विष्णु महेश आदि संज्ञा धरो | जग-विजयी जमराज नाश ताको करो ||
आनंद-कारण दु:ख-निवारण परम-मंगल-मय सही | मोसो पतित नहिं और तुम-सो पतित-तार सुन्यो नहीं ||
चिंतामणी पारस कल्पतरु एकभव-सुखकार ही | तुम भक्ति-नवका जे चढ़े ते भये भवदधि-पार ही ||९||

(दोहा)

तुम भवदधि तें तरि गये, भये निकल अविकार | तारतम्य इस भक्ति को, हमें उतारो पार ||१०||

।।इति अभिषेक पाठ।।

विनयपाठ

इह विधि ठाड़े होयके, प्रथम पढ़ें यो पाठ | धन्य जिनेश्वर देव तुम! नाशे कर्म जु आठ ||१||
अनंत चतुष्टय के धनी, तुम ही हो सिरताज | मुक्ति-वधू के कंत तुम, तीन भुवन के राज ||२||
तिहुँ जग की पीड़ा-हरन, भवदधि शोषणहार | ज्ञायक हो तुम विश्व के, शिवसुख के कर्तार ||३||
हर्ता अघ-अंधियार के, कर्ता धर्म-प्रकाश | थिरतापद दातार हो, धर्ता निजगुण रास ||४||
धर्मामृत उर जलधिसों, ज्ञानभानु तुम रूप | तुमरे चरण-सरोज को, नावत तिहुं जग भूप ||५||
मैं वन्दौं जिनदेव को, कर अति निर्मल भाव | कर्मबंध के छेदने, और न कछू उपाव ||६||
भविजन को भवकूपतैं, तुम ही काढ़नहार | दीनदयाल अनाथपति, आतम गुणभंडार ||७||
चिदानंद निर्मल कियो, धोय कर्मरज मैल | सरल करी या जगत में, भविजन को शिवगैल ||८||
तुम पदपंकज पूजतैं, विघ्न रोग टर जाय | शत्रु मित्रता को धरै, विष निर्विषता थाय ||९||
चक्री खगधर इंद्र-पद, मिलें आपतैं आप | अनुक्रमकर शिवपद लहें, नेम सकल हनि पाप ||१०||
तुम बिन मैं व्याकुल भयो, जैसे जल बिन मीन | जन्म जरा मेरी हरो, करो मोहि स्वाधीन ||११||
पतित बहुत पावन किये, गिनती कौन करेव | अंजन से तारे प्रभु! जय! जय! जय! जिनदेव ||१२||
थकी नाव भवदधिविषै तुम प्रभु पार करेव | खेवटिया तुम हो प्रभु! जय! जय! जय! जिनदेव ||१३||
रागसहित जग में रुल्यो, मिले सरागी देव | वीतराग भेंटो अबै, मेटो राग कुटेव ||१४||
कित निगोद! कित नारकी! कित तिर्यंच अज्ञान | आज धन्य! मानुष भयो, पायो जिनवर थान ||१५||
तुमको पूजें सुरपती, अहिपति नरपति देव | धन्य भाग्य मेरो भयो, करन लग्यो तुम सेव ||१६||
अशरण के तुम शरण हो, निराधार आधार | मैं डूबत भवसिंधु में, खेओ लगाओ पार ||१७||
इन्द्रादिक गणपति थके, कर विनती भगवान | अपनो विरद निहारि के, कीजै आप समान ||१८||
तुमरी नेक सुदृष्टितें, जग उतरत है पार | हा!हा! डूबो जात हौं, नेक निहारि निकार ||१९||
जो मैं कहहूँ औरसों, तो न मिटे उर-झार | मेरी तो तोसों बनी, तातैं करौं पुकार ||२०||
वन्दौं पांचों परमगुरु, सुरगुरु वंदत जास | विघनहरन मंगलकरन, पूरन परम प्रकाश ||२१||
चौबीसों जिन पद नमौं, नमौं शारदा माय | शिवमग-साधक साधु नमि, रच्यो पाठ सुखदाय ||२२||

मंगलपाठ

मंगल मूर्ति परम पद, पंच धरौं नित ध्यान | हरो अमंगल विश्व का, मंगलमय भगवान |१|
मंगल जिनवर पद नमौं, मंगल अरिहन्त देव | मंगलकारी सिद्ध पद, सो वन्दौं स्वयमेव |२|
मंगल आचारज मुनि, मंगल गुरु उवझाय | सर्व साधु मंगल करो, वन्दौं मन वच काय |३|
मंगल सरस्वती मातका, मंगल जिनवर धर्म | मंगल मय मंगल करो, हरो असाता कर्म |४|
या विधि मंगल से सदा, जग में मंगल होत | मंगल नाथूराम यह, भव सागर दृढ़ पोत |५|

भजन : मैं थाने पूजन आयो

श्री जी! मैं थाने पूजन आयो , मेरी अरज सुनो दीनानाथ जी | श्री जी! मैं थाने पूजन आयो |१|
जल चन्दन अक्षत शुभ लेके ता में पुष्प मिलायो | श्री जी! मैं थाने पूजन आयो |२|
चरु अरु दीप धूप फल लेकर, सुन्दर अर्घ बनायो | श्री जी! मैं थाने पूजन आयो |३|
आठ पहर की साठ जु घड़ियां, शान्ति शरण तोरी आयो | श्री जी! मैं थाने पूजन आयो |४|
अर्घ बनाय गाय गुणमाला, तेरे चरणनि शीश झुकायो | श्री जी! मैं थाने पूजन आयो |५|
मुझ सेवक की अर्ज यही है, जामन मरण मिटावो | मेरा आवागमन छुटावो श्री जी मैं थाने पूजन आयो |६|

पूजा विधि प्रारम्भ

ओं जय! जय! जय! नमोऽस्तु! नमोऽस्तु! नमोऽस्तु!
णमो अरिहंताणं, णमो सिद्धाणं, णमो आइरियाणं |
णमो उवज्झायाणं, णमो लोए सव्वसाहूणं ||
| ओं ह्रीं अनादिमूलमंत्रेभ्यो नमः | (पुष्पांजलि क्षेपण करें)

चत्तारि मंगलं अरिहंता मंगलं, सिद्धा मंगलं, साहू मंगलं, केवलपण्णत्तो धम्मो मंगलं |
चत्तारि लोगुत्तमा, अरिहंता लोगुत्तमा, सिद्धा लोगुत्तमा, साहू लोगुत्तमा, केवलिपण्णत्तो धम्मो लोगुत्तमो |
चत्तारि सरणं पव्वज्जामि अरिहंते सरणं पव्वज्जामि, सिद्धे सरणं पव्वज्जामि, साहू सरणं पव्वज्जामि,
केवलिपण्णत्तं धम्मं सरणं पव्वज्जामि ||
| ओं नमोऽर्हते स्वाहा | (पुष्पांजलि क्षेपण करें)

अपवित्रः पवित्रोवा सुस्थितो दुःस्थितोऽपि वा | ध्यायेत्पंच-नमस्कारं सर्वपापैः प्रमुच्यते |१|
अपवित्रः पवित्रो वा सर्वावस्थां गतोऽपि वा | यः स्मरेत्परमात्मानं स बाह्याभ्यंतरे शुचिः |२|
अपराजित-मंत्रोऽयं, सर्व-विघ्न-विनाशनः | मंगलेषु च सर्वेषु, प्रथमं मंगलमं मतः |३|
एसो पंच-णमोयारो, सव्व-पावप्पणासणो | मंगलाणं च सव्वेसिं, पढमं हवइ मंगलम् |४|
अर्हमित्यक्षरं ब्रह्मं, वाचकं परमेष्ठिनः | सिद्धचक्रस्य सद्बीजं सर्वतः प्रणमाम्यहम् |५|
कर्माष्टक-विनिर्मुक्तं मोक्ष-लक्ष्मी-निकेतनम् | सम्यक्त्वादि-गुणोपेतं सिद्धचक्रं नमाम्यहम् |६|
विघ्नौघाः प्रलयं यान्ति, शाकिनी भूत पन्नगाः | विषं निर्विषतां याति स्तूयमाने जिनेश्वरे |७|

पंच कल्याणक अर्घ्य

उदक-चंदन-तंदुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः |
धवल-मंगल-गान-रवाकुले जिनगृहे जिनकल्याणकमहं यजे ||
ओं ह्रीं श्री भगवतो गर्भ जन्म तप ज्ञान निर्वाण पंचकल्याणकेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा |१|

पंचपरमेष्ठी का अर्घ्य

उदक-चंदन-तंदुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः |
धवल-मंगल-गान-रवाकुले जिनगृहे जिननाथमहं यजे ||
ॐ ह्रीं श्रीअरिहन्त-सिद्धाचार्योपाध्याय-सर्वसाधुभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा |२|

श्री जिनसहस्रनाम का अर्घ्य

उदक-चंदन-तंदुल-पुष्पकैश्चरु-सुदीप-सुधूप-फलार्घ्यकैः |
धवल-मंगल-गान-रवाकुले जिनगृहे जिननाममहं यजे ||
ॐ ह्रीं श्रीभगवज्जिन अष्टाधिक सहस्रनामेभ्योऽर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा |३|

स्वस्ति (मंगल) विधान

श्रीमज्जिनेन्द्रमभिवंद्य जगत्त्रयेशम्, स्याद्वाद-नायक-मनंत-चतुष्टयार्हम् |
श्रीमूलसंघ-सुदृशां सुकृतैकहेतुर्, जैनेन्द्र-यज्ञ-विधिरेष मयाऽभ्यधायि |१|

स्वस्ति त्रिलोक-गुरवे जिन-पुंगवाय, स्वस्ति स्वभाव-महिमोदय-सुस्थिताय |
स्वस्ति प्रकाश-सहजोर्ज्जित दृग्मयाय, स्वस्ति प्रसन्न-ललिताद्भुत-वैभवाय |२|

स्वस्त्युच्छलद्विमल-बोध-सुधा-प्लवाय, स्वस्ति स्वभाव-परभाव-विभासकाय |
स्वस्ति त्रिलोक-विततैक-चिदुद्गमाय, स्वस्ति त्रिकाल-सकलायत-विस्तृताय |३|
द्रव्यस्य शुद्धिमधिगम्य यथानुरूपम्, भावस्य शुद्धिमधिकमधिगंतुकामः |
आलंबनानि विविधान्यवलम्ब्य वल्गन्, भूतार्थ यज्ञ-पुरुषस्य करोमि यज्ञम् |४|

अर्हत्पुराण – पुरुषोत्तम – पावनानि, वस्तून्यनूनमखिलान्ययमेक एव |
अस्मिन् ज्वलद्विमल-केवल-बोधवह्नौ, पुण्यं समग्रमहमेकमना जुहोमि |५|
| इति विधियज्ञ प्रतिज्ञायै जिनप्रतिमाग्रे पुष्पांजलिं क्षिपामि |

चतुर्विंशति तीर्थंकर स्वस्ति मंगल विधान

श्री वृषभो नः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अजितः | श्री संभवः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अभिनंदनः|
श्री सुमतिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री पद्मप्रभः |श्री सुपार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्री चन्द्रप्रभः|
श्री पुष्पदंतः स्वस्ति, स्वस्ति श्री शीतलः | श्री श्रेयांसः स्वस्ति, स्वस्ति श्री वासुपूज्यः|
श्री विमलः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अनंत :| श्री धर्मः स्वस्ति, स्वस्ति श्री शांतिः|
श्री कुंथुः स्वस्ति, स्वस्ति श्री अरहनाथः | श्री मल्लिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री मुनिसुव्रतः|
श्री नमिः स्वस्ति, स्वस्ति श्री नेमिनाथः | श्री पार्श्वः स्वस्ति, स्वस्ति श्री वर्द्धमानः|
।।इति श्रीचतुर्विंशति-तीर्थंकर स्वस्ति मंगलविधानं पुष्पांजलिं क्षिपामि।।

अथ परमर्षि स्वस्ति मंगल विधान

नित्या-प्रकंपाद्भ-भुत-केवलौघा: स्फुरन-मन:पर्यय-शुद्ध-बोधा:|
दिव्या-वधिज्ञान-बल-प्रबोधा: स्वस्ति-क्रियासु: परमर्षयो न: ||१||
कोष्ठ-स्थ-धान्यो-पममे-क-बीजं संभिन्न-संश्रोतृ-पदानुसारि |
चतुर-र्विधं बुद्धि-बलं दधाना: स्वस्ति-क्रियासु: परमर्षयो न: ||२||

सं-स्पर्शनं सं-श्रवणं च दूराद-आ-स्वादन-घ्राण-वि-लोकनानि |
दिव्यान्-मति ज्ञान-बलाद्व-वहन्त: स्वस्ति-क्रियासु: परमर्षयो न: ||३||
प्रज्ञा-प्रधाना: श्रमणा: समृद्धा: प्रत्येक-बुद्धा: दश-सर्व-पूर्वै: |
प्रवादिनोऽष्टांग-निमित्त-विज्ञा: स्वस्ति-क्रियासु: परमर्षयो न: ||४||

जङ्घा-नल-श्रेणि-फला-म्बु-तन्तु-प्रसून-बीजां-कुर-चारणा-ह्वा: |
नभोऽगंण-स्वैर-वि-हारिणश्च स्वस्ति-क्रियासु: परमर्षयो न: ||५||
अणिम्नि दक्षा: कुशला: महिम्नि, लघिम्नि शक्ता: कृतिनो गरिम्णि |
मनो-वपुर-वागृ-बलिनश्च नित्यं स्वस्ति-क्रियासु: परमर्षयो न: ||६||

स-काम-रूपित्व-वशित्व-मै-श्यं प्राकाम्य-मन्तर्द्धि-म-थाप्ति-मा-प्ता: |
तथाऽप्रतीघात-गुण-प्रधाना: स्वस्ति-क्रियासु: परमर्षयो न: ||७||
दीप्तं च तप्तं च त्तथो महौ-गं घोरं तपो घोर-पराक्रम-स्था: |
ब्रह्मा-परं घोर-गुणं चरन्त: स्वस्ति-क्रियासु: परमर्षयो न: ||८||

आमर्ष-सर्वोष-धयस्तथाशी-र्विषा-विषा – दृष्टि-विषा-विषाश्च |
सखेल-विड्जल्ल-मलौ-षधीशा: स्वस्ति-क्रियासु: परमर्षयो न: ||९||
क्षीरं स्रवंतोऽत्र घृतं स्रवंत: मधु स्रवंतोऽप्य-मृतं स्रवंत: |
अ-क्षीण-संवास-महानसाश्च स्वस्ति-क्रियासु: परमर्षयो न: ||१०||

|| पुष्पांजलिं क्षिपामि ||

समुच्चय पूजा

श्री देव-शास्त्र-गुरु, विद्यमान बीस तीर्थंकर, अनंतानंत सिद्ध-समूह

(दोहा)

देव-शास्त्र-गुरु नमन करि, बीस तीर्थंकर ध्याय | सिद्ध शुद्ध राजत सदा, नमूँ चित्त हुलसाय ||

ओं ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुसमूह! श्रीविद्यमानविंशतितीर्थंकर समूह!
श्रीअनंतानंत सिद्धपरमेष्ठीसमूह! अत्र अवतर! अवतर! संवौषट्! (आह्वाननम्)
ओं ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुसमूह! श्रीविद्यमानविंशतितीर्थंकर समूह! श्री
अनंतानंत सिद्धपरमेष्ठीसमूह! अत्र तिष्ठ! तिष्ठ! ठ:! ठ:! (स्थापनम्)
ओं ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुसमूह! श्रीविद्यमानविंशतितीर्थंकर समूह! श्री
अनंतानंत सिद्धपरमेष्ठीसमूह! अत्र मम सन्निहितो भव! भव! वषट्! (सन्निधिकरणम्)

अनादिकाल से जग में स्वामिन्, जल से शुचिता को माना | शुद्ध-निजातम सम्यक्-रत्नत्रय-निधि को नहिं पहिचाना ||
अब निर्मल-रत्नत्रय-जल ले, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ | विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध-प्रभू के गुण गाऊँ ||
ओं ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्य: श्रीविद्यमानविंशति-तीर्थंकरेभ्य:
श्री अनंतानंत सिद्धपरमेष्ठिभ्य: जन्म-जरा-मृत्यु विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।१।

भव-आताप मिटावन की, निज में ही क्षमता समता है | अनजाने अब तक मैंने, पर में की झूठी ममता है ||
चंदन-सम शीतलता पाने, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ | विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध-प्रभू के गुण गाऊँ ||
ओं ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्य: श्रीविद्यमानविंशति-तीर्थंकरेभ्य:
श्रीअनंतानंत सिद्धपरमेष्ठिभ्य:संसारताप-विनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।२।

अक्षय-पद बिन फिरा जगत की, लख चौरासी योनी में | अष्ट-कर्म के नाश करन को, अक्षत तुम ढिंग लाया मैं ||
अक्षय-निधि निज की पाने को, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ | विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध-प्रभू के गुण गाऊँ ||
ओं ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्य: श्रीविद्यमानविंशति-तीर्थंकरेभ्य:
श्रीअनंतानंत सिद्धपरमेष्ठिभ्य:अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।३।

पुष्प-सुगन्धी से आतम ने, शील-स्वभाव नशाया है | मन्मथ-बाणों से बिंध करके, चहुँ-गति दु:ख उपजाया है ||
स्थिरता निज में पाने को, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ | विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध-प्रभू के गुण गाऊँ ||
ओं ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्य: श्रीविद्यमानविंशति-तीर्थंकरेभ्य:
श्रीअनंतानंत सिद्धपरमेष्ठिभ्य:कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।४।

षट् रस-मिश्रित भोजन से, ये भूख न मेरी शांत हुई | आतमरस अनुपम चखने से, इन्द्रिय-मन-इच्छा शमन हुई ||
सर्वथा भूख के मेटन को, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ | विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध-प्रभू के गुण गाऊँ ||
ओं ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्य: श्रीविद्यमानविंशति-तीर्थंकरेभ्य:
श्रीअनंतानंत सिद्धपरमेष्ठिभ्य:क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।५।

जड़ दीप विनश्वर को अब तक, समझा था मैंने उजियारा |निज-गुण दरशायक ज्ञान-दीप से, मिटा मोह का अंधियारा ||
ये दीप समर्पित करके मैं, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ | विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध-प्रभू के गुण गाऊँ ||
ओं ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्य: श्रीविद्यमानविंशति-तीर्थंकरेभ्य:
श्रीअनंतानंत सिद्धपरमेष्ठिभ्य:मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।६।

ये धूप अनल में खेने से, कर्मों को नहीं जलायेगी | निज में निज की शक्ति-ज्वाला, जो राग-द्वेष नशायेगी ||
उस शक्ति-दहन प्रगटाने को, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ | विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध-प्रभू के गुण गाऊँ ||
ओं ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्य: श्रीविद्यमानविंशति-तीर्थंकरेभ्य:
श्रीअनंतानंत सिद्धपरमेष्ठिभ्य:अष्टकर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।७।

पिस्ता बदाम श्रीफल लवंग, चरणन तुम ढिंग मैं ले आया |
आतमरस-भीने निजगुण-फल, मम मन अब उनमें ललचाया ||
अब मोक्ष महाफल पाने को, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ | विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध-प्रभू के गुण गाऊँ ||
ओं ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्य: श्रीविद्यमानविंशति-तीर्थंकरेभ्य:
श्रीअनंतानंत सिद्धपरमेष्ठिभ्य:मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।८।

अष्टम-वसुधा पाने को, कर में ये आठों द्रव्य लिये | सहज-शुद्ध स्वाभाविकता से, निज में निज-गुण प्रगट किये ||
ये अर्घ समर्पण करके मैं, श्री देव-शास्त्र-गुरु को ध्याऊँ | विद्यमान श्री बीस तीर्थंकर, सिद्ध-प्रभू के गुण गाऊँ ||

ओं ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्य: श्रीविद्यमानविंशति-तीर्थंकरेभ्य:
श्रीअनंतानंत सिद्धपरमेष्ठिभ्य: अनर्घ्य पद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।१।

जयमाला

देव-शास्त्र-गुरु, बीस-जिन, सिद्ध-अनंतानंत |
गाऊँ गुण-जयमालिका, भव-दु:ख नशें अनंत ||

(छन्द भुजंगप्रयात)

नसे घातिया-कर्म अरिहंत देवा, करें सुर-असुर नर मुनि नित्य सेवा |
दरश-ज्ञान-सुख-बल अनंत के स्वामी, छियालीस गुणयुत महाईश नामी |
तेरी दिव्य-वाणी सदा भव्य-मानी, महामोह-विध्वंसिनी मोक्षदानी |
अनेकांतमय द्वादशांगी बखानी, नमौं लोकमाता श्री जैनवाणी |
विरागी अचारज उवज्झाय साधू, दरश ज्ञान भंडार समता अराधू |
नगन वेशधारी सु एकाविहारी, निजानंद मंडित मुकतिपथ प्रचारी |
विदेहक्षेत्र में तीर्थंकर बीस राजें, विहरमान वंदूँ सभी पाप भाजें |
नमूँ सिद्ध निर्भय निरामय सुधामी, अनाकुल समाधान सहजाभिरामी |

(चौबोला छन्द)

देव-शास्त्र-गुरु बीस-तीर्थंकर, सिद्ध हृदय-बिच धर ले रे |
पूजन ध्यान गान-गुण करके, भवसागर जिय तर ले रे ||

ओं ह्रीं श्रीदेव-शास्त्र-गुरुभ्य: श्रीविद्यमानविंशति-तीर्थंकरेभ्य: श्रीअनंतानंत सिद्धपरमेष्ठभ्य:
जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(जोगीरासा छन्द)

भूत-भविष्यत्-वर्तमान की, तीस चौबीसी मैं ध्याऊँ | चैत्य-चैत्यालय कृत्रिमाकृत्रिम, तीन-लोक के मन लाऊँ ||

ओं ह्रीं त्रिकालसम्बन्धी तीस चौबीसी, त्रिलोकसम्बन्धी कृत्रिमाकृत्रिम चैत्य-चैत्यालयेभ्य:
अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत्यभक्ति आलोचन चाहूँ कायोत्सर्ग अघनाशन हेत | कृत्रिमा-कृत्रिम तीन लोक में, राजत हैं जिनबिम्ब अनेक ||
चतुर निकाय के देव जजैं, ले अष्टद्रव्य निज-भक्ति समेत | निज-शक्ति अनुसार जजूँ मैं, कर समाधि पाऊँ शिव-खेत ||

ओं ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धी समस्त-कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालय-सम्बन्धी जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व-मध्य-अपराह्न की बेला, पूर्वाचार्यों के अनुसार | देव-वंदना करूँ भाव से, सकल-कर्म की नाशनहार ||
पंच महागुरु सुमिरन करके, कायोत्सर्ग करूँ सुखकार | सहज स्वभाव शुद्ध लख अपना, जाऊँगा अब मैं भवपार ||

(पुष्पांजलिं क्षेपण कर नौ बार णमोकार मंत्र जपें)

श्री देव-शास्त्र-गुरु पूजा(कविश्री युगलजी)

केवल-रवि-किरणों से जिसका, सम्पूर्ण प्रकाशित है अंतर |
उस श्री जिनवाणी में होता, तत्वों का सुन्दरतम दर्शन ||
सद्दर्शन-बोध-चरण-पथ पर, अविरल जो बढ़ते हैं मुनिगण |
उन देव-परम-आगम गुरु को, शत-शत वंदन शत-शत वंदन ||
ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरु समूह! अत्र अवतर! अवतर! संवौषट् (आह्वाननम्)।
ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरु समूह! अत्र तिष्ठ! तिष्ठ! ठ:! ठ:! (स्थापनम्)।
ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरु समूह! अत्र मम सन्निहितो भव! भव! वषट्! (सन्निधिकरणम्)।

इन्द्रिय के भोग मधुर विष सम, लावण्यमयी कंचन काया |
यह सब कुछ जड़ की क्रीड़ा है, मैं अब तक जान नहीं पाया ||
मैं भूल स्वयं के वैभव को, पर-ममता में अटकाया हूँ |
अब निर्मल सम्यक्-नीर लिये, मिथ्यामल धोने आया हूँ ||
ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़-चेतन की सब परिणति प्रभु! अपने-अपने में होती है |
अनुकूल कहें प्रतिकूल कहें, यह झूठी मन की वृत्ति है ||
प्रतिकूल संयोगों में क्रोधित, होकर संसार बढ़ाया है |
संतप्त-हृदय प्रभु! चंदन-सम, शीतलता पाने आया है ||
ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: संसारतापविनाशनाय चन्दनं निर्वपामीति स्वाहा।

उज्ज्वल हूँ कुंद-धवल हूँ प्रभु! पर से न लगा हूँ किंचित् भी |
फिर भी अनुकूल लगें उन पर, करता अभिमान निरंतर ही ||
जड़ पर झुक-झुक जाता चेतन, नश्वर वैभव को अपनाया |
निज शाश्वत अक्षय निधि पाने, अब दास चरण रज में आया ||
ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

यह पुष्प सुकोमल कितना है! तन में माया कुछ शेष नहीं |
निज-अंतर का प्रभु भेद कहूँ, उसमें ऋजुता का लेश नहीं ||
चिंतन कुछ फिर सम्भाषण कुछ, क्रिया कुछ की कुछ होती है |
स्थिरता निज में प्रभु पाऊँ, जो अंतर-कालुष धोती है ||
ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अब तक अगणित जड़-द्रव्यों से, प्रभु! भूख न मेरी शांत हुई |
तृष्णा की खाई खूब भरी, पर रिक्त रही वह रिक्त रही ||
युग-युग से इच्छा-सागर में, प्रभु! गोते खाता आया हूँ |
पंचेन्द्रिय-मन के षट्-रस तज, अनुपम-रस पीने आया हूँ ||
ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जग के जड़ दीपक को अब तक, समझा था मैंने उजियारा |
झंझा के एक झकोरे में, जो बनता घोर तिमिर कारा ||
अतएव प्रभो! यह नश्वर-दीप, समर्पण करने आया हूँ |
तेरी अंतर लौ से निज, अंतर-दीप जलाने आया हूँ ||
ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जड़-कर्म घुमाता है मुझको, यह मिथ्या-भ्रांति रही मेरी |
मैं राग-द्वेष किया करता, जब परिणति होती जड़ केरी ||
यों भाव-करम या भाव-मरण, सदियों से करता आया हूँ |
निज-अनुपम गंध-अनल से प्रभु, पर-गंध जलाने आया हूँ ||
ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: अष्टकर्मदहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

जग में जिसको निज कहता मैं, वह छोड़ मुझे चल देता है |
मैं आकुल-व्याकुल हो लेता, व्याकुल का फल व्याकुलता है ||
मैं शांत निराकुल चेतन हूँ, है मुक्तिरमा सहचरि मेरी |
यह मोह तड़क कर टूट पड़े, प्रभु! सार्थक फल पूजा तेरी ||

ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

क्षणभर निजरस को पी चेतन, मिथ्यामल को धो देता है |
काषायिक भाव विनष्ट किये, निज-आनंद अमृत पीता है ||
अनुपम-सुख तब विलसित होता, केवल-रवि जगमग करता है |
दर्शन-बल पूर्ण प्रकट होता, यह ही अरिहन्त-अवस्था है ||
यह अर्घ्य समर्पण करके प्रभु! निज-गुण का अर्घ्य बनाऊँगा |
और निश्चित तेरे सदृश प्रभु! अरिहन्त-अवस्था पाऊँगा ||

ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: अनर्घ्यपदप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

भव-वन में जी भर घूम चुका, कण-कण को जी भर-भर देखा |
मृग-सम मृगतृष्णा के पीछे, मुझको न मिली सुख की रेखा ||१||
झूठे जग के सपने सारे, झूठी मन की सब आशाएँ |
तन जीवन यौवन **अस्थिर**[१] हैं, क्षण भंगुर पल में मुरझाएँ ||२||
सम्राट् महाबली सेनानी, उस क्षण को टाल सकेगा क्या |
अशरण[२] मृत काया में हर्षित, निज जीवन डाल सकेगा क्या ||३||
संसार[३] महा-दु:खसागर के, प्रभु! दु:खमय सुख-आभासों में |
मुझको न मिला सुख क्षणभर भी, कंचन-कामिनि-प्रासादों में ||४||
मैं एकाकी **एकत्व**[४] लिए, एकत्व लिए सब ही आते |
तन-धन को साथी समझा था, पर वे भी छोड़ चले जाते ||५||
मेरे न हुए ये मैं इनसे, अतिभिन्न अखंड निराला हूँ |
निज में पर से **अन्यत्व**[५] लिए, निज सम-रस पीनेवाला हूँ ||६||

जिसके श्रृंगारों में मेरा, यह महँगा जीवन घुल जाता |
अत्यन्त **अशुचि**[६] जड़ काया से, इस चेतन का कैसा नाता ||७||
दिन-रात शुभाशुभ भावों से, मेरा व्यापार चला करता |
मानस वाणी अरु काया से, **आस्रव**[७] का द्वार खुला रहता ||8||
शुभ और अशुभ की ज्वाला से, झुलसा है मेरा अंतस्थल |
शीतल समकित किरणें फूटें, **संवर**[८] से जागे अंतर्बल ||९||
फिर तप की शोधक वह्नि जगे, कर्मों की कड़ियाँ टूट पड़ें |
सर्वांग निजात्म प्रदेशों से, अमृत के **निर्झर**[९] फूट पड़ें ||१०||
हम छोड़ चलें यह **लोक**[१०] तभी, लोकांत विराजें क्षण में जा |
निज-लोक हमारा वासा हो, शोकांत बनें फिर हमको क्या ||११||
जागे मम दुर्लभ **बोधि**[११] प्रभो! दुर्नयतम सत्वर टल जावे |
बस ज्ञाता-दृष्टा रह जाऊँ, मद-मत्सर मोह विनश जावे ||१२||
चिर रक्षक **धर्म**[१२] हमारा हो, हो धर्म हमारा चिर साथी |
जग में न हमारा कोई था, हम भी न रहें जग के साथी ||१३||
चरणों में आया हूँ प्रभुवर! शीतलता मुझको मिल जावे |
मुरझाई ज्ञान-लता मेरी, निज-अंतर्बल से खिल जावे ||१४||
सोचा करता हूँ भोगों से, बुझ जावेगी इच्छा-ज्वाला |
परिणाम निकलता है लेकिन, मानों पावक में घी डाला ||१५||
तेरे चरणों की पूजा से, इन्द्रिय-सुख की ही अभिलाषा |
अब तक न समझ ही पाया प्रभु! सच्चे सुख की भी परिभाषा ||१६||
तुम तो अविकारी हो प्रभुवर! जग में रहते जग से न्यारे |
अतएव झुकें तव चरणों में, जग के माणिक-मोती सारे ||१७||
स्याद्वादमयी तेरी वाणी, शुभनय के झरने झरते हैं |
उस पावन नौका पर लाखों, प्राणी भव-वारिधि तिरते हैं ||१८||
हे गुरुवर! शाश्वत सुख-दर्शक, यह नग्न-स्वरूप तुम्हारा है |
जग की नश्वरता का सच्चा, दिग्दर्श कराने वाला है ||१९||
जब जग विषयों में रच-पच कर, गाफिल निद्रा में सोता हो |
अथवा वह शिव के निष्कंटक- पथ में विष-कंटक बोता हो ||२०||
हो अर्ध-निशा का सन्नाटा, वन में वनचारी चरते हों |

तब शांत निराकुल मानस तुम, तत्त्वों का चिंतन करते हो ||२१||

करते तप शैल नदी-तट पर, तरु-तल वर्षा की झड़ियों में |

समतारस पान किया करते, सुख-दु:ख दोनों की घड़ियों में ||२२||

अंतर-ज्वाला हरती वाणी, मानों झड़ती हों फुलझड़ियाँ |

भव-बंधन तड़-तड़ टूट पड़ें, खिल जावें अंतर की कलियाँ ||२३||

तुम-सा दानी क्या कोई हो, जग को दे दीं जग की निधियाँ |

दिन-रात लुटाया करते हो, सम-शम की अविनश्वर मणियाँ ||२४||

हे निर्मल देव! तुम्हें प्रणाम, हे ज्ञानदीप आगम! प्रणाम |

हे शांति-त्याग के मूर्तिमान, शिव-पंथ-पथी गुरुवर! प्रणाम ||

ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: अनर्घ्यपदप्राप्तये जयमाला पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

सिद्ध-पूजा का अर्घ्य

जल-फल वसुवृंदा अरघ अमंदा, जजत अनंदा के कंदा |

मेटो भवफंदा सब दु:खदंदा, 'हीराचंदा' तुम वंदा ||

त्रिभुवन के स्वामी त्रिभुवननामी, अंतरयामी अभिरामी |

शिवपुर-विश्रामी निजनिधि पामी, सिद्ध जजामी सिरनामी ||

ओं ह्रीं श्री अनाहत-पराक्रमाय सर्व-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।१।

विद्यमान बीस तीर्थंकरों का अर्घ्य

जल-फल आठों दरव, अरघ कर प्रीति धरी है, गणधर इन्द्रनि हू तैं, थुति पूरी न करी है |

'द्यानत' सेवक जानके (हो), जग तें लेहु निकार ||

सीमंधर जिन आदि दे बीस विदेह-मँझार | श्री जिनराज हो, भवि-तारणतरण जहाज (श्री महाराज हो) ||

ओं ह्रीं श्री सीमंधर-युगमंधर-बाहु-सुबाहु-संजात-स्वयंप्रभ-ऋषभानन-अनन्तवीर्य-सूर्यप्रभ-विशालकीर्ति- वज्रधर -चन्द्रानन-भद्रबाहु-भुजंगम-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीरसेन-महाभद्र-देवयश-अजितवीर्य इति विदेह क्षेत्रे विद्यमान-विंशति-तीर्थंकरेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा|

(जोगीरासा छन्द)

भूत-भविष्यत्-वर्तमान की, तीस चौबीसी मैं ध्याऊँ |
चैत्य-चैत्यालय कृत्रिमाकृत्रिम, तीन-लोक के मन लाऊँ ||

ओं ह्रीं त्रिकालसम्बन्धी तीस चौबीसी, त्रिलोकसम्बन्धी कृत्रिमाकृत्रिम चैत्य-चैत्यालयेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत्यभक्ति आलोचन चाहूँ कायोत्सर्ग अघनाशन हेत |
कृत्रिमा-कृत्रिम तीन लोक में, राजत हैं जिनबिम्ब अनेक ||
चतुर निकाय के देव जजैं, ले अष्टद्रव्य निज-भक्ति समेत |
निज-शक्ति अनुसार जजूँ मैं, कर समाधि पाऊँ शिव-खेत ||

ओं ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धी समस्त-कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालय-सम्बन्धी जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व-मध्य-अपराह्न की बेला, पूर्वाचार्यों के अनुसार |
देव-वंदना करूँ भाव से, सकल-कर्म की नाशनहार ||
पंच महागुरु सुमिरन करके, कायोत्सर्ग करूँ सुखकार |
सहज स्वभाव शुद्ध लख अपना, जाऊँगा अब मैं भवपार ||

(पुष्पांजलिं क्षेपण कर नौ बार णमोकार मंत्र जपें)

अथ देव-शास्त्र-गुरु पूजा

(अडिल्ल छन्द)

प्रथम देव अरहंत सुश्रुत सिद्धांत जू | गुरु निर्ग्रन्थ महन्त मुकतिपुर-पन्थ जू ||
तीन रतन जग-माँहि सो ये भवि ध्याइये | तिनकी भक्ति-प्रसाद परमपद पाइये ||

(दोहा)

पूजों पद अरिहंत के, पूजौं गुरु-पद सार | पूजौं देवी सरस्वती, नित-प्रति अष्ट प्रकार ||
ओं ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरु-समूह! अत्र अवतर! अवतर! संवौषट्! (आहवाननम्)
ओं ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरु-समूह! अत्र तिष्ठ! तिष्ठ! ठ:! ठ:! (स्थापनम्)
ओं ह्रीं श्री देव-शास्त्र-गुरु-समूह! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्! (सन्निधिकरणम्)

(गीता छन्द)

सुरपति उरग नरनाथ तिनकरि वंदनीक सुपद-प्रभा | अति-शोभनीक सुवरण उज्ज्वल देख छवि मोहित सभा ||
वर नीर क्षीरसमुद्र घट भरि अग्र तसु बहुविधि नचूं | अरिहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूं ||
(दोहा)
मलिन-वस्तु हर लेत सब, जल-स्वभाव मल-छीन | जा सों पूजौं परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन ||१||
ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: जन्मजरामृत्युविनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।

जे त्रिजग-उदर मंझार प्राणी तपत अति दुद्धर खरे | तिन अहित-हरन सुवचन जिनके परम शीतलता भरे ||
तसु भ्रमर-लोभित घ्राण पावन सरस चंदन घिसि सचूँ | अरिहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ ||
(दोहा)
चंदन शीतलता करे, तपत वस्तु परवीन | जा सों पूजौं परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन ||२||
ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: संसार-तापविनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।

यह भवसमुद्र अपार तारण के निमित्त सुविधि ठई | अति दृढ़ परम पावन यथारथ भक्ति वर नौका सही ||
उज्ज्वल अखंडित सालि तंदुल पुंज धरि त्रय गुण जचूँ | अरिहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ ||
(दोहा)

तंदुल सालि सुगंध अति, परम अखंडित बीन | जा सों पूजौं परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन ||३||

ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य अक्षयपदप्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।

जे विनयवंत सुभव्य-उर-अंबुज-प्रकाशन भान हैं | जे एक मुख चारित्र भाषत त्रिजगमाँहिं प्रधान हैं ||
लहि कुंद-कमलादिक पहुप भव-भव कुवेदन सों बचूँ | अरिहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ ||

(दोहा)

विविध भाँति परिमल सुमन, भ्रमर जास आधीन | जा सों पूजौं परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन ||४||

ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: कामबाणविध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।

अतिसबल मदकंदर्प जाको क्षुधा-उरग अमान है | दुस्सह भयानक तासु नाशन को सु-गरुड़ समान है ||
उत्तम छहों रसयुक्त नित नैवेद्य करि घृत में पचूँ | अरिहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ ||

(दोहा)

नानाविधि संयुक्तरस, व्यंजन सरस नवीन | जा सों पूजों परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन ||५||

ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: क्षुधारोगविनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जे त्रिजग-उद्यम नाश कीने मोह-तिमिर महाबली | तिंहि कर्मघाती ज्ञानदीप प्रकाशज्योति प्रभावली ||
इह भाँति दीप प्रजाल कंचन के सुभाजन में खचूँ | अरिहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ ||

(दोहा)

स्व-पर-प्रकाशक ज्योति अति, दीपक तमकरि हीन | जा सों पूजों परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन ||६||

ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो मोहांधकारविनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।

जो कर्म-ईंधन दहन अग्नि-समूह-सम उद्धत लसे | वर धूप तासु सुगन्धताकरि सकल परिमलता हँसे ||
इह भाँति धूप चढ़ाय नित भव-ज्वलन माहिं नहीं पचूँ | अरिहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ ||

(दोहा)

अग्निमाँहि परिमल दहन, चंदनादि गुणलीन | जा सों पूजों परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन ||७||

ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: अष्टकर्मविध्वन्सनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।

लोचन सुरसना घ्राण उर उत्साह के करतार हैं | मो पे न उपमा जाय वरणी सकल-फल गुणसार हैं ||
सो फल चढ़ावत अर्थपूरन परम अमृतरस सचूँ | अरिहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ ||

(दोहा)

जे प्रधान फल फल विषें, पंचकरण रस-लीन | जा सों पूजौं परमपद, देव-शास्त्र-गुरु तीन ||८||

ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।

जल परम उज्ज्वल गंध अक्षत पुष्प चरु दीपक धरूँ | वर धूप निरमल फल विविध बहु जनम के पातक हरूँ ||

इहि भाँति अर्घ चढ़ाय नित भवि करत शिवपंकति मचूँ | अरिहंत श्रुत-सिद्धांत गुरु-निर्ग्रन्थ नित पूजा रचूँ ||

(दोहा)

वसुविधि अर्घ संजोय के अति उछाह मन कीन | जा सों पूजौं परमपद देव-शास्त्र-गुरु तीन ||९||

ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्यो अनर्घ्यप्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जयमाला

देव-शास्त्र-गुरु रतन शुभ, तीन रतन करतार | भिन्न भिन्न कहुँ आरती, अल्प सुगुण विस्तार ||१||

(पद्धरि छन्द)

कर्मन की त्रेसठ प्रकृति नाशि, जीते अष्टादश दोषराशि | जे परम सुगुण हैं अनंत धीर, कहवत के छयालिस गुणगंभीर ||२||

शुभ समवसरण शोभा अपार, शत इंद्र नमत कर सीस धार | देवाधिदेव अरिहंत देव, वंदौं मन वच तन करि सुसेव ||३||

जिनकी ध्वनि ह्वे ओंकाररूप, निर-अक्षरमय महिमा अनूप | दश-अष्ट महाभाषा समेत, लघुभाषा सात शतक सुचेत ||४||

सो स्याद्वादमय सप्तभंग, गणधर गूँथे बारह सु-अंग | रवि शशि न हरें सो तम हराय, सो शास्त्र नमौं बहु प्रीति ल्याय ||५||

गुरु आचारज उवझाय साधु, तन नगन रतनत्रय निधि अगाध | संसार-देह वैराग्य धार, निरवाँछि तपें शिवपद निहार ||६||

गुण छत्तिस पच्चिस आठबीस, भव-तारन-तरन जिहाज ईस | गुरु की महिमा वरनी न जाय, गुरुनाम जपौं मन वचन काय ||७||

(सोरठा)

कीजे शक्ति प्रमान शक्ति-बिना सरधा धरे | 'द्यानत' सरधावान अजर अमरपद भोगवे ||८||

ओं ह्रीं श्री देवशास्त्रगुरुभ्य: जयमालापूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

श्रीजिन के परसाद ते, सुखी रहें सब जीव | या ते तन-मन-वचनतें, सेवो भव्य सदीव ||

।। इत्याशीर्वाद: पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

सिद्ध-पूजा का अर्घ्य

जल-फल वसुवृंदा अरघ अमंदा, जजत अनंदा के कंदा | मेटो भवफंदा सब दु:खदंदा, 'हीराचंदा' तुम वंदा ||
त्रिभुवन के स्वामी त्रिभुवननामी, अंतरयामी अभिरामी | शिवपुर-विश्रामी निजनिधि पामी, सिद्ध जजामी सिरनामी ||

ओं ह्रीं श्री अनाहत-पराक्रमाय सर्व-कर्म-विनिर्मुक्ताय सिद्धचक्राधिपतये सिद्धपरमेष्ठिने अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।१।

विद्यमान बीस तीर्थंकरों का अर्घ्य

जल-फल आठों दरव, अरघ कर प्रीति धरी है,गणधर इन्द्रनि हू तैं, थुति पूरी न करी है |
'द्यानत' सेवक जानके (हो), जग तें लेहु निकार ||
सीमंधर जिन आदि दे बीस विदेह-मँझार | श्री जिनराज हो, भवि-तारणतरण जहाज (श्री महाराज हो) ||

ओं ह्रीं श्री सीमंधर-युगमंधर-बाहु-सुबाहु-संजात-स्वयंप्रभ-ऋषभानन-अनन्तवीर्य-सूर्यप्रभ-विशालकीर्ति-व्रजधर-चन्द्रानन-भद्रबाहु-भुजंगम-ईश्वर-नेमिप्रभ-वीरसेन-महाभद्र-देवयश-अजितवीर्य इति विदेह क्षेत्रे विद्यमान-विंशति-तीर्थंकरेभ्यो नम: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा|

(जोगीरासा छन्द)

भूत-भविष्यत्-वर्तमान की, तीस चौबीसी मैं ध्याऊँ | चैत्य-चैत्यालय कृत्रिमाकृत्रिम, तीन-लोक के मन लाऊँ ||

ओं ह्रीं त्रिकालसम्बन्धी तीस चौबीसी, त्रिलोकसम्बन्धी कृत्रिमाकृत्रिम चैत्य-चैत्यालयेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

चैत्यभक्ति आलोचन चाहूँ कायोत्सर्ग अघनाशन हेत | कृत्रिमा-कृत्रिम तीन लोक में, राजत हैं जिनबिम्ब अनेक ||
चतुर निकाय के देव जजैं, ले अष्टद्रव्य निज-भक्ति समेत | निज-शक्ति अनुसार जजूँ मैं, कर समाधि पाऊँ शिव-खेत ||

ओं ह्रीं त्रिलोकसम्बन्धी समस्त-कृत्रिमाकृत्रिमचैत्यालय-सम्बन्धी जिनबिम्बेभ्य: अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

पूर्व-मध्य-अपराह्न की बेला, पूर्वाचार्यों के अनुसार | देव-वंदना करूँ भाव से, सकल-कर्म की नाशनहार ||
पंच महागुरु सुमिरन करके, कायोत्सर्ग करूँ सुखकार | सहज स्वभाव शुद्ध लख अपना, जाऊँगा अब मैं भवपार ||

(पुष्पांजलिं क्षेपण कर नौ बार णमोकार मंत्र जपें)

श्री पार्श्वनाथ-जिन पूजा

(गीता छन्द)

वर स्वर्ग प्राणत सों विहाय सुमात वामा-सुत भये | अश्वसेन के पारस जिनेश्वर चरन जिनके सुर नये ||
नव-हाथ-उन्नत तन विराजे उरग-लच्छन अति लसें | थापूँ तुम्हें जिन आय तिष्ठो! करम मेरे सब नसें ||

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर! अवतर! संवौषट्! (आह्वाननम्)
ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ! तिष्ठ! ठ:! ठ:! (स्थापनम्)
ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्! (सन्निधिरणम्)

(चामर छन्द)

क्षीर-सोम के समान अम्बु-सार लाय के |हेमपात्र धारि के सु आपको चढ़ाय के ||
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँ सदा |दीजिए निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ||
ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।१।

चंदनादि केशरादि स्वच्छ गंध लेय के |आप चर्ण चर्चुं मोह-ताप को हनीजिये ||
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँ सदा |दीजिए निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ||
ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय भवताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।२।

फेन चंद्र के समान अक्षतान् लाय के |चर्ण के समीप सार पुंज को रचाय के ||
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँ सदा |दीजिए निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ||
ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।३।

केवड़ा गुलाब और केतकी चुनाय के |धार चर्ण के समीप काम को नशाय के ||
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँ सदा |दीजिए निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ||
ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाण-विध्वन्सनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।४।

घेवरादि बावरादि मिष्ठ सद्य में सनें |आप चर्न चर्चतें क्षुधादि रोग को हने ||
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँ सदा |दीजिए निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ||
ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।५।

लाय रत्न-दीप को सनेह पूर के भरूँ |वातिका कपूर बारि मोह-ध्वांत को हरूँ ||
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँ सदा |दीजिए निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ||
ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।६।

धूप गंध लेय के सुअग्नि-संग जारयै |तास धूप के सुसंग अष्टकर्म बारयै ||
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँ सदा |दीजिए निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ||
ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।७।

खारिकादि चिरभटादि रत्न-थाल में भरूँ |हर्ष धारि के जजूँ सुमोक्ष सौख्य को वरूँ ||
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँ सदा |दीजिए निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ||
ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।८।

नीर गंध अक्षतान् पुष्प चारु लीजियै |दीप धूप श्रीफलादि अर्घ तें जजीजियै ||
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँ सदा |दीजिए निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ||
ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।९।

पंचकल्याणक-अर्घ्यावली

शुभ प्राणत स्वर्ग विहाये, वामा माता उर आये | बैशाख तनी दुति कारी, हम पूजें विघ्न-निवारी ||
ओं ह्रीं वैशाख-कृष्ण-द्वितीयायां गर्भकल्याणक-प्राप्ताय
श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा। ।१।

जनमे त्रिभुवन-सुखदाता, एकादशि पौष विख्याता | श्यामा-तन अद्भुत राजै, रवि-कोटिक तेज सु लाजै ||
ओं ह्रीं पौषकृष्ण-एकादश्यां जन्म कल्याणक-प्राप्ताय
श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा। ।२।

कलि पौष एकादशि आई, तब बारह भावन भाई | अपने कर लौंच सु कीना, हम पूजें चरन जजीना ||

ओं ह्रीं पौषकृष्ण-एकादश्यां तपकल्याणक-प्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।।३।

कलि चैत चतुर्थी आई, प्रभु केवलज्ञान उपाई | तब प्रभु उपदेश जु कीना, भवि जीवन को सुख दीना ||

ओं ह्रीं चैत्राकृष्ण-चतुर्थ्यां ज्ञानकल्याणक-प्राप्ताय श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा। ।४।

सित-सातें-सावन आई, शिव-नारि वरी जिनराई | सम्मेदाचल हरि माना, हम पूजें मोक्ष-कल्याना ||

ओं ह्रीं श्रावणशुक्ल-सप्तम्यां मोक्षकल्याणक-प्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा। ।५।

जयमाला

(छन्द मत्तगयन्द)

पारसनाथ जिनेंद्र तने वच, पौन भखी जरते सुन पाये |
कर्यो सरधान लह्यो पद आन, भये पद्मावति-शेष कहाये ||
नाम-प्रताप टरें संताप, सुभव्यन को शिवशर्म दिखाये |
हो विश्वसेन के नंद भले! गुण गावत हैं तुमरे हर्षाये ||

(दोहा)

केकी-कंठ समान छवि, वपु उतंग नव-हाथ |
लक्षण उरग निहार पग, वंदूँ पारसनाथ ||१||

(मोतियादाम छन्द)

रची नगरी छह मास अगार, बने चहुँ गोपुर शोभ अपार |
सु कोट-तनी रचना छवि देत, कंगूरन पे लहकें बहु केत ||२||
बनारस की रचना जु अपार, करी बहु भाँति धनेश तैयार |
तहाँ विश्वसेन नरेन्द्र उदार, करे सुख वाम सु दे पटनार ||३||
तज्यो तुम प्राणत नाम विमान, भये तिनके वर नंदन आन |

तबै सुर-इंद्र नियोगनि आय, गिरीन्द्र करी विधि न्हौन सु जाय ||४||
पिता-घर सौंपि गये निजधाम, कुबेर करे वसु जाम जु काम |
बढ़े जिन दोज-मयंक समान, रमे बहु बालक निर्जर आन ||५||
भए जब अष्टम वर्ष कुमार, धरे अणुव्रत्त महा सुखकार |
पिता जब आन करी अरदास, करो तुम ब्याह वरो मम आस ||६||
करी तब नाहिं, रहे जगचंद, किये तुम काम कषाय जु मंद |
चढ़े गजराज कुमारन संग, सु देखत गंग-तनी सुतरंग ||७||
लख्यो इक रंक करे तप घोर, चहूँ दिसि अग्नि बलै अति जोर |
कहे जिननाथ अरे सुन भ्रात, करे बहु जीवन की मत घात ||८||
भयो तब कोप कहै कित जीव, जले तब नाग दिखाय सजीव |
लख्यो यह कारण भावन भाय, नये दिव-ब्रह्म ऋषि सुर आय ||९||
तबहिं सुर चार प्रकार नियोग, धरी शिविका निजकंध मनोग |
कियो वनमाँहिं निवास जिनंद, धरे व्रत चारित आनंदकंद ||१०||
गहे तहँ अष्टम के उपवास, गये धनदत्त तने जु अवास |
दियो पयदान महा सुखकार, भई पनवृष्टि तहाँ तिहिं बार ||११||
गये तब कानन माँहिं दयाल, धर्यो तुम योग सबहिं अघटाल |
तबै वह धूम सुकेतु अयान, भयो कमठाचर को सुर आन ||१२||
करै नभ गौन लखे तुम धीर, जु पूरब बैर विचार गहीर |
कियो उपसर्ग भयानक घोर, चली बहु तीक्षण पवन झकोर ||१३||
रह्यो दशहूँ दिश में तम छाय, लगी बहु अग्नि लखी नहिं जाय |
सु रुंडन के बिन मुण्ड दिखाय, पड़े जल मूसल धार अथाय ||१४||
तबै पद्मावति-कंत धनिंद, नये जुग आय जहाँ जिनचंद |
भग्यो तब रंक सु देखत हाल, लह्यो तब केवलज्ञान विशाल ||१५||
दियो उपदेश महाहितकार, सुभव्यनि बोधि सम्मेद पधार |
'सुवर्णभद्र' जहँ कूट प्रसिद्ध, वरी शिवनारि लही वसु-रिद्ध ||१६||
जजूँ तुव चरन दोउ कर जोर, प्रभू लखिये अब ही मम ओर |
कहे 'बखतावर' 'रत्न' बनाय, जिनेश हमें भव-पार लगाय ||१७||

(घत्ता)

जय पारस देवं, सुरकृत सेवं, वंदत चरण सुनागपती |
करुणा के धारी, पर उपकारी, शिवसुखकारी कर्महती ||

ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(अडिल्ल)

जो पूजे मन लाय भव्य पारस प्रभु नित ही | ताके दु:ख सब जाय भीति व्यापे नहि कित ही ||
सुख-संपति अधिकाय पुत्र-मित्रादिक सारे | अनुक्रमसों शिव लहे, 'रत्न' इमि कहें पुकारे ||

।।इत्याशीर्वाद: पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

श्री पार्श्वनाथ-जिन पूजा(‘पुष्पेन्दु’)

हे पार्श्वनाथ! हे अश्वसेन-सुत! करुणासागर तीर्थंकर | हे सिद्धशिला के अधिनायक! हे ज्ञान-उजागर तीर्थंकर ||
हमने भावुकता में भरकर, तुमको हे नाथ! पुकारा है | प्रभुवर! गाथा की गंगा से, तुमने कितनों को तारा है ||
हम द्वार तुम्हारे आये हैं, करुणा कर नेक निहारो तो | मेरे उर के सिंहासन पर, पग धारो नाथ! पधारो तो ||

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र! अत्र अवतर! अवतर! संवौषट्! (आह्वानम्)

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र!अत्र तिष्ठ! तिष्ठ! ठ:!ठ! (स्थापनं)

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्र!अत्र मम सन्निहितो भव! भव! वषट्! (सन्निधिकरणम्)

(शंभु छन्द)

मैं लाया निर्मल जलधारा, मेरा अंतर निर्मल कर दो |
मेरे अंतर को हे भगवन! शुचि-सरल भावना से भर दो ||
मेरे इस आकुल-अंतर को, दो शीतल सुखमय शांति प्रभो |
अपनी पावन अनुकम्पा से, हर लो मेरी भव-भ्रांति प्रभो ||

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।१।

प्रभु! पास तुम्हारे आया हूँ, भव-भव संताप सताया हूँ |
तव पद-चर्चन के हेतु प्रभो! मलयागिरि चंदन लाया हूँ ||
अपने पुनीत चरणाम्बुज की, हमको कुछ रेणु प्रदान करो |
हे संकटमोचन तीर्थंकर! मेरे मन के संताप हरो ||

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय संसारताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।२।

प्रभुवर! क्षणभंगुर वैभव को, तुमने क्षण में ठुकराया है |
निज तेज तपस्या से तुमने, अभिनव अक्षय पद पाया है ||
अक्षय हों मेरे भक्ति भाव, प्रभु पद की अक्षय प्रीति मिले |
अक्षय प्रतीति रवि-किरणों से, प्रभु मेरा मानस-कुंज खिले ||

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।३।

यद्यपि शतदल की सुषमा से, मानस-सर शोभा पाता है |
पर उसके रस में फँस मधुकर, अपने प्रिय-प्राण गँवाता है ||
हे नाथ! आपके पद-पंकज, भवसागर पार लगाते हैं |
इस हेतु आपके चरणों में, श्रद्धा के सुमन चढ़ाते हैं ||

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा ।४।

व्यंजन के विविध समूह प्रभो! तन की कुछ क्षुधा मिटाते हैं |
चेतन की क्षुधा मिटाने में प्रभु! ये असफल रह जाते हैं ||
इनके आस्वादन से प्रभु! मैं संतुष्ट नहीं हो पाया हूँ |
इस हेतु आपके चरणों में, नैवेद्य चढ़ाने आया हूँ ||

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।५।

प्रभु! दीपक की मालाओं से, जग-अंधकार मिट जाता है |
पर अंतर्मन का अंधकार, इनसे न दूर हो पाता है ||
यह दीप सजाकर लाए हैं, इनमें प्रभु! दिव्य प्रकाश भरो |
मेरे मानस-पट पर छाए, अज्ञान-तिमिर का नाश करो ||

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।६।

यह धूप सुगन्धित द्रव्यमयी, नभमंडल को महकाती है |
पर जीवन-अघ की ज्वाला में, ईंधन बनकर जल जाती है ||
प्रभुवर! इसमें वह तेज भरो, जो अघ को ईंधन कर डाले |
हे वीर विजेता कर्मों के! हे मुक्ति-रमा वरने वाले ||

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अष्टकर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा ।७।

यों तो ऋतुपति ऋतु-फल से, उपवन को भर जाता है |
पर अल्प-अवधि का ही झोंका, उनको निष्फल कर जाता है ||
दो सरस-भक्ति का फल प्रभुवर! जीवन-तरु तभी सफल होगा |
सहजानंद-सुख से भरा हुआ, इस जीवन का प्रतिफल होगा ||

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा ।८।

पथ की प्रत्येक विषमता को, मैं समता से स्वीकार करूँ |
जीवन-विकास के प्रिय-पथ की, बाधाओं का परिहार करूँ ||
मैं अष्ट-कर्म-आवरणों का, प्रभुवर! आतंक हटाने को |
वसु-द्रव्य संजोकर लाया हूँ, चरणों में नाथ! चढ़ाने को ||

ओं ह्रीं श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।९।

पंचकल्याणक – अर्घ्यावली

(दोहा)

वामादेवी के गर्भ में, आये दीनानाथ | चिर-अनाथ जगती हुई, सजग-समोद-सनाथ ||

(गीता छन्द)

अज्ञानमय इस लोक में, आलोक-सा छाने लगा | होकर मुदित सुरपति नगर में, रत्न बरसाने लगा ||
गर्भस्थ बालक की प्रभा, प्रतिभा प्रकट होने लगी | नभ से निशा की कालिमा, अभिनव उषा धोने लगी ||

ओं ह्रीं वैशाखकृष्ण-द्वितीयायां गर्भमंगल-मंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।१।

द्वार-द्वार पर सज उठे, तोरण वंदनवार | काशी नगरी में हुआ, पार्श्व-प्रभु अवतार ||
प्राची दिशा के अंग में, नूतन-दिवाकर आ गया | भविजन जलज विकसित हुए, जग में उजाला छा गया ||
भगवान् के अभिषेक को, जल क्षीरसागर ने दिया | इन्द्रादि ने है मेरु पर, अभिषेक जिनवर का किया ||

ओं ह्रीं पौष कृष्णएकादश्यां जन्ममंगल-मंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।२।

निरख अथिर संसार को, गृह-कुटुम्ब सब त्याग | वन में जा दीक्षा धरी, धारण किया विराग ||
निज-आत्मसुख के स्रोत में, तन्मय प्रभु रहने लगे | उपसर्ग और परीषहों को, शांति से सहने लगे ||
प्रभु की विहार वनस्थली, तप से पुनीता हो गई | कपटी कमठ-शठ की कुटिलता, भी विनीता हो गई ||

ओं ह्रीं पौषकृष्णैकादश्यां तपोमंगल-मंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।३।

आत्मज्योति से हट गये, तम के पटल महान | प्रकट प्रभाकर-सा हुआ, निर्मल केवलज्ञान ||
देवेन्द्र द्वारा विश्वहित, सम-अवसरण निर्मित हुआ | समभाव से सबको शरण का, पंथ निर्देशित हुआ ||
था शांति का वातावरण, उसमें न विकृत विकल्प थे | मानों सभी तब आत्महित के, हेतु कृत-संकल्प थे ||

ओं ह्रीं चैत्रकृष्ण-चतुर्थीदिने केवलज्ञान-प्राप्ताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।४।

युग-युग के भव-भ्रमण से, देकर जग को त्राण | तीर्थंकर श्री पार्श्व ने, पाया पद-निर्वाण ||
निर्लिप्त, आज नितांत है, चैतन्य कर्म-अभाव से | है ध्यान-ध्याता-ध्येय का, किंचित् न भेद स्वभाव से||
तव पाद-पद्मों की प्रभु, सेवा सतत पाते रहें | अक्षय असीमानंद का, अनुराग अपनाते रहें ||

ओं ह्रीं श्रावणशुक्ल-सप्तम्यां मोक्षमंगल-मंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।५।

वंदना-गीत

अनादिकाल से कर्मों का मैं सताया हूँ | इसी से आपके दरबार आज आया हूँ ||
न अपनी भक्ति न गुणगान का भरोसा है | दयानिधान श्री भगवान् का भरोसा है ||
इक आस लेकर आया हूँ कर्म कटाने के लिये | भेंट मैं कुछ भी नहीं लाया चढ़ाने के लिये ||१||
जल न चंदन और अक्षत पुष्प भी लाया नहीं | है नहीं नैवेद्य-दीप अरु धूप-फल पाया नहीं ||
हृदय के टूटे हुए उद्गार केवल साथ हैं | और कोई भेंट के हित अर्घ्य सजवाया नहीं ||
है यही फल फूल जो समझो चढ़ाने के लिये | भेंट मैं कुछ भी नहीं लाया चढ़ाने के लिये ||२||
माँगना यद्यपि बुरा समझा किया मैं उम्रभर | किन्तु अब जब माँगने पर बाँधकर आया कमर ||
और फिर सौभाग्य से जब आप-सा दानी मिला | तो भला फिर माँगने में आज क्यों रक्खूँ कसर ||
प्रार्थना है आप ही जैसा बनाने के लिये | भेंट मैं कुछ भी नहीं लाया चढ़ाने के लिये ||३||
यदि नहीं यह दान देना आपको मंजूर है | और फिर कुछ माँगने से दास ये मजबूर है ||
किन्तु मुँह माँगा मिलेगा मुझको ये विश्वास है | क्योंकि लौटाना न इस दरबार का दस्तूर है ||
प्रार्थना है कर्म-बंधन से छुड़ाने के लिए | भेंट मैं कुछ भी नहीं लाया चढ़ाने के लिये ||४||
हो न जब तक माँग पूरी नित्य सेवक आयेगा | आपके पद-कंज में 'पुष्पेन्दु' शीश झुकायेगा ||
है प्रयोजन आपको यद्यपि न भक्ति से मेरी | किन्तु फिर भी नाथ मेरा तो भला हो जायेगा ||
आपका क्या जायेगा बिगड़ी बनाने के लिये | भेंट मैं कुछ भी नहीं लाया चढ़ाने के लिये ||५||

ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

जो पूजे मन लाय भव्य पारस प्रभु नित ही | ताके दु:ख सब जाय भीति व्यापे नहि कित ही ||
सुख-संपति अधिकाय पुत्र-मित्रादिक सारे | अनुक्रमसों शिव लहे, 'रत्न' इमि कहें पुकारे ||

।।इत्याशीर्वाद: पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

श्री अहिच्छत्र-पार्श्वनाथ-जिन पूजा

हे! पार्श्वनाथ करुणानिधान महिमा महान् मंगलकारी | शिवभर्तारी सुखभंडारी सर्वज्ञ सुखारी त्रिपुरारी ||
तुम धर्मसेत करुणानिकेत आनंदहेत अतिशयधारी | तुम चिदानंद आनंदकंद दु:ख-द्वंद-फंद संकटहारी ||
आवाहन करके आज तुम्हें अपने मन में पधराऊँगा | अपने उर के सिंहासन पर गद-गद हो तुम्हें बिठाऊँगा ||
मेरा निर्मल-मन टेर रहा हे नाथ! हृदय में आ जाओ | मेरे सूने मन-मंदिर में पारस भगवान् समा जाओ ||

ओं ह्रीं श्रीअहिच्छत्र पार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र अवतर अवतर संवौषट्! (आह्वाननम्)
ओं ह्रीं श्रीअहिच्छत्र पार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र तिष्ठ तिष्ठ ठ: ठ:!(स्थापनम्)
ओं ह्रीं श्रीअहिच्छत्र पार्श्वनाथजिनेन्द्र ! अत्र मम सन्निहितो भव भव वषट्! (सन्निधिकरणम्)

भव वन में भटक रहा हूँ मैं, भर सकी न तृष्णा की खाई |
भवसागर के अथाह दु:ख में, सुख की जल-बिंदु नहीं पाई ||
जिस भाँति आपने तृष्णा पर, जय पाकर तृषा बुझाई है |
अपनी अतृप्ति पर अब तुमसे, जय पाने की सुधि आई है ||

ओं ह्रीं श्रीअहिच्छत्र पार्श्वनाथजिनेन्द्र ***जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा ।१।***

क्रोधित हो क्रूर कमठ ने जब, नभ से ज्वाला बरसाई थी |
उस आत्मध्यान की मुद्रा में, आकुलता तनिक न आई थी ||
विघ्नों पर बैर-विरोधों पर, मैं साम्यभाव धर जय पाऊँ |
मन की आकुलता मिट जाये, ऐसी शीतलता पा जाऊँ ||

ओं ह्रीं श्रीअहिच्छत्र पार्श्वनाथजिनेन्द्र ***संसारताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा ।२।***

तुमने कर्मों पर जय पाकर, मोती सा जीवन पाया है |
यह निर्मलता मैं भी पाऊँ, मेरे मन यही समाया है ||
यह मेरा अस्तव्यस्त जीवन, इसमें सुख कहीं न पाता हूँ |
मैं भी अक्षय पद पाने को, शुभ अक्षत तुम्हें चढ़ाता हूँ ||

ओं ह्रीं श्रीअहिच्छत्र पार्श्वनाथजिनेन्द्र ***अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा ।३।***

अध्यात्मवाद के पुष्पों से, जीवन फुलवारी महकाई |
जितना-जितना उपसर्ग सहा, उतनी-उतनी दृढ़ता आई ||
मैं इन पुष्पों से वंचित हूँ, अब इनको पाने आया हूँ |
चरणों पर अर्पित करने को, कुछ पुष्प संजोकर लाया हूँ ||

*ओं ह्रीं श्रीअहिच्छत्र पार्श्वनाथजिनेन्द्र **कामबाण-विध्वंसनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा** ।४।*

जय पाकर चपल इन्द्रियों पर, अंतर की क्षुधा मिटा डाली |
अपरिग्रह की आलोक शक्ति, अपने अंदर ही प्रगटा ली ||
भटकाती फिरती क्षुधा मुझे, मैं तृप्त नहीं हो पाया हूँ |
इच्छाओं पर जय पाने को, मैं शरण तुम्हारी आया हूँ ||

*ओं ह्रीं श्रीअहिच्छत्र पार्श्वनाथजिनेन्द्र **क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा** ।५।*

अपने अज्ञान अंधेरे में, वह कमठ फिरा मारा-मारा |
व्यन्तर विक्रियाधारी था पर, तप के उजियारे से हारा ||
मैं अंधकार में भटक रहा, उजियारा पाने आया हूँ |
जो ज्योति आप में दर्शित है, वह ज्योति जगाने आया हूँ ||

*ओं ह्रीं श्रीअहिच्छत्र पार्श्वनाथजिनेन्द्र **मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा** ।६।*

तुमने तप के दावानल में, कर्मों की धूप जलाई है |
जो सिद्ध-शिला तक जा पहुँची, वह निर्मल गंध उड़ाई है ||
मैं कर्म बंधनों में जकड़ा, भव-बंधन से घबराया हूँ |
वसु कर्म दहन के लिये तुम्हें, मैं धूप चढ़ाने आया हूँ ||

*ओं ह्रीं श्रीअहिच्छत्र पार्श्वनाथजिनेन्द्र **अष्टकर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा** ।७।*

तुम महा तपस्वी शांतिमूर्ति, उपसर्ग तुम्हें न डिगा पाये |
तप के फल ने पद्मावति अरु, इन्द्रों के आसन कंपाये ||
ऐसे उत्तम फल की आशा मैं, मन में उमड़ी पाता हूँ |
ऐसा शिव सुख फल पाने को, फल की शुभ भेंट चढ़ाता हूँ ||

*ओं ह्रीं श्रीअहिच्छत्र पार्श्वनाथजिनेन्द्र **मोक्षफल-प्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा** ।८।*

संघर्षो में उपसर्गो में, तुमने समता का भाव धरा |
आदर्श तुम्हारा अमृत-बन, भक्तों के जीवन में बिखरा ||
मैं अष्ट-द्रव्य से पूजा का, शुभ थाल सजा कर लाया हूँ |
जो पदवी तुमने पाई है, मैं भी उस पर ललचाया हूँ ||
ओं ह्रीं श्रीअहिच्छत्र पार्श्वनाथजिनेन्द्र अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।९।

पंचकल्याणक- अर्घ्यावली

(अर्ध नरेंद्र छंद)

बैशाख-कृष्ण-द्वितीया के दिन, तुम वामा के उर में आये|
श्री अश्वसेन-नृप के घर में, आनंद भरे मंगल छाये ||
ओं ह्रीं वैशाख-कृष्ण-द्वितीयायां गर्भमंगल-मंडिताय
श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।१।

जब पौष-कृष्ण-एकादशि को, धरती पर नया प्रसून खिला |
भूले भटके भ्रमते जग को, आत्मोन्नति का आलोक मिला ||
ओं ह्रीं पौषकृष्ण-एकादश्यां जन्ममंगल-मंडिताय
श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।२।

एकादशि- पौष-कृष्ण के दिन, तुमने संसार अथिर पाया |
दीक्षा लेकर आध्यात्मिक पथ, तुमने तप द्वारा अपनाया ||
ओं ह्रीं पौषकृष्ण -एकादशीदिने तपोमंगल-मंडिताय
श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।३।

अहिच्छत्र-धरा पर जी भर कर, की क्रूर कमठ ने मनमानी |
तब कृष्ण-चैत्र-चतुर्थी को, पद प्राप्त किया केवल ज्ञानी ||
यह वंदनीय हो गई धरा, दश भव का बैरी पछताया |
देवों ने जय जयकारों से, सारा भूमंडल गुँजाया ||
ओं ह्रीं चैत्रकृष्ण-चतुर्थीदिवसे श्रीअहिच्छत्रातीर्थे ज्ञानसाम्राज्य-प्राप्ताय
श्रीपार्श्वनाथ जिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।४।

श्रावण शुक्ला सप्तमि के दिन, सम्मेद-शिखर ने यश पाया |
'सुवरणभद्र' कूट से जब, शिव मुक्तिरमा को परिणाया ||

ओं ह्रीं श्रावणशुक्ल-सप्तम्यां सम्मेदशिखरस्य सुवर्णभद्रकूटात् मोक्षमंगल- मंडिताय श्रीपार्श्वनाथजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।५।

जयमाला

(तर्ज : राधेश्याम)

सुरनर किन्नर गणधर फणधर, योगीश्वर ध्यान लगाते हैं |
भगवान् तुम्हारी महिमा का, यशगान मुनीश्वर गाते हैं ||१||
जो ध्यान तुम्हारा ध्याते हैं, दु:ख उनके पास न आते हैं |
जो शरण तुम्हारी रहते हैं, उनके संकट कट जाते हैं ||२||
तुम कर्मदली तुम महाबली, इन्द्रिय सुख पर जय पाई है |
मैं भी तुम जैसा बन जाऊँ, मन में यह आज समाई है ||३||
तुमने शरीर औ आत्मा के, अंतर स्वभाव को जाना है |
नश्वर शरीर का मोह तजा, निश्चय स्वरूप पहिचाना है ||४||
तुम द्रव्य-मोह औ भाव मोह, इन दोनों से न्यारे-न्यारे |
जो पुद्गल के निमित्त कारण, वे राग-द्वेष तुम से हारे ||५||
तुम पर निर्जर वन में बरसे, ओले-शोले पत्थर-पानी |
आलोक तपस्या के आगे, चल सकी न शठ की मनमानी ||६||
यह सहन शक्ति का ही बल है, जो तप के द्वारा आया था |
जिसने स्वर्गों में देवों के, सिंहासन को कंपाया थ ||७||
'अहि' का स्वरूप धरकर तत्क्षण, धरणेन्द्र स्वर्ग से आया था |
ध्यानस्थ आप के ऊपर प्रभु, फण मंडप बनकर छाया था ||८||
उपसर्ग कमठ का नष्ट किया, मस्तक पर फण मंडप रचकर |
पद्मादेवी ने उठा लिया, तुमको सिर के सिंहासन पर ||९||
तप के प्रभाव से देवों ने, व्यंतर की माया विनशाई |
पर प्रभो आपकी मुद्रा में, तिलमात्र न आकुलता आई ||१०||
उपसर्ग का आतंक तुम्हें, हे प्रभु! तिलभर न डिगा पाया |
अपनी विडम्बना पर बैरी, असफल हो मन में पछताया ||११||

शठ कमठ बैर के वशीभूत, भौतिक बल पर बौराया था |
अध्यात्म-आत्मबल का गौरव, वह मूर्ख समझ न पाया था ||१२||
दश भव तक जिसने बैर किया, पीड़ायें देकर मनमानी |
फिर हार मानकर चरणों में, झुक गया स्वयं वह अभिमानी ||१३||
यह बैर महा दु:खदायी है, यह बैर न बैर मिटाता है |
यह बैर निरंतर प्राणी को, भवसागर में भटकाता है ||१४||
जिनको भव-सुख की चाह नहीं, दु:ख से न जरा भय खाते हैं |
वे सर्व-सिद्धियों को पाकर, भवसागर से तिर जाते हैं ||१५||
जिसने भी शुद्ध मनोबल से, ये कठिन परीषह झेली हैं |
सब ऋद्धि-सिद्धियाँ नत होकर, उनके चरणों पर खेली हैं ||१६||
जो निर्विकल्प चैतन्यरूप, शिव का स्वरूप तुमने पाया |
ऐसा पवित्र पद पाने को, मेरा अंतर मन ललचाया ||१७||
कार्माण-वर्गणायें मिलकर, भव वन में भ्रमण कराती हैं |
जो शरण तुम्हारी आते हैं, ये उनके पास न आती हैं ||१८||
तुमने सब बैर विरोधों पर, समदर्शी बन जय पाई है |
मैं भी ऐसी समता पाऊँ,यह मेरे हृदय समाई है ||१९||
अपने समान ही तुम सबका, जीवन विशाल कर देते हो |
तुम हो तिखाल वाले बाबा, जग को निहाल कर देते हो ||२०||
तुम हो त्रिकाल दर्शी तुमने, तीर्थंकर का पद पाया है |
तुम हो महान् अतिशय धारी, तुम में आनंद समाया है ||२१||
चिन्मूरति आप अनंतगुणी, रागादि न तुमको छू पाये |
इस पर भी हर शरणागत, मन-माने सुख साधन पाये ||२२||
तुम रागद्वेष से दूर-दूर, इनसे न तुम्हारा नाता है |
स्वयमेव वृक्ष के नीचे जग, शीतल छाया पा जाता है ||२३||
अपनी सुगन्ध क्या फूल कहीं, घर-घर आकर बिखराते हैं!
सूरज की किरणों को छूकर, सुमन स्वयं खिल जाते हैं ||२४||
भौतिक पारस मणि तो केवल, लोहे को स्वर्ण बनाती है |
हे पार्श्व प्रभो! तुमको छूकर, आत्मा कुंदन बन जाती है ||२५||
तुम सर्वशक्तिधारी हो प्रभु, ऐसा बल मैं भी पाऊँगा |

यदि यह बल मुझको भी दे दो, फिर कुछ न माँगने आऊँगा ||२६||
कह रहा भक्ति के वशीभूत, हे दयासिन्धु! स्वीकारो तुम |
जैसे तुम जग से पार हुये, मुझको भी पार उतारो तुम ||२७||
जिसने भी शरण तुम्हारी ली, वह खाली न रह पाया है |
अपनी अपनी आशाओं का, सबने वाँछित फल पाया है ||२८||
बहुमूल्य सम्पदायें सारी, ध्याने वालों ने पाई हैं |
पारस के भक्तों पर निधियाँ, स्वयमेव सिमटकर आई हैं ||२९||
जो मन से पूजा करते हैं, पूजा उनको फल देती है
प्रभु पूजा भक्त पुजारी के, सारे संकट हर लेती है ||३०||
जो पथ तुमने अपनाया है, वह सीधा शिव को जाता है |
जो इस पथ का अनुयायी है,वह परम मोक्षपद पाता है |३१|

*ओं ह्रीं श्रीअहिच्छत्र पार्श्वनाथजिनेन्द्र **जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।***

(दोहा)

पार्श्वनाथ-भगवान् को, जो पूजे धर ध्यान | उसे लोक-परलोक के, मिलें सकल वरदान ||

।। इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।।

श्री महावीर-जिन पूजा

(श्री वीर महा-अतिवीर)

श्रीमत वीर हरें भव-पीर, भरें सुख-सीर अनाकुलताई | केहरि-अंक अरीकर-दंक, नयें हरि-पंकति-मौलि सुहाई ||
मैं तुमको इत थापत हूं प्रभु! भक्ति-समेत हिये हरषाई | हे करुणा-धन-धारक देव! इहाँ अब तिष्ठहु शीघ्रहि आई ||

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र! अत्र अवतर! अवतर! संवौषट्! (आह्वाननम्)
ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र! अत्र तिष्ठ! तिष्ठ! ठ:! ठ:! (स्थापनम्)
ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्र! अत्र मम सन्निहितो भव: भव: वषट्! (सन्निधिकरणम्)

क्षीरोदधि-सम शुचि नीर, कंचन-भृंग भरूं | प्रभु वेग हरो भवपीर, यातैं धार करूं ||
श्री वीर महा-अतिवीर, सन्मति नायक हो | जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मति-दायक हो ||
ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय जन्म-जरा-मृत्यु-विनाशनाय जलं निर्वपामीति स्वाहा।१।

मलयागिर चंदनसार, केसर-संग घसूं | प्रभु भव-आताप निवार, पूजत हिय हुलसूं ||
श्री वीर महा-अतिवीर, सन्मति नायक हो | जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मति-दायक हो ||
ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय भवाताप-विनाशनाय चंदनं निर्वपामीति स्वाहा।२।

तंदुल सित शशिसम शुद्ध, लीनों थार भरी | तसु पुंज धरौं अविरुद्ध, पावों शिवनगरी ||
श्री वीर महा-अतिवीर, सन्मति नायक हो | जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मति-दायक हो ||
ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अक्षयपद-प्राप्तये अक्षतान् निर्वपामीति स्वाहा।३।

सुरतरु के सुमन समेत, सुमन सुमन प्यारे | सो मनमथ-भंजन हेत, पूजूँ पद थारे ||
श्री वीर महा-अतिवीर, सन्मति नायक हो | जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मति-दायक हो ||
ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय कामबाण-विध्वन्सनाय पुष्पं निर्वपामीति स्वाहा।४।

रस रज्जत सज्जत सद्य, मज्जत थार भरी | पद जज्जत रज्जत अद्य, भज्जत भूख अरी ||
श्री वीर महा-अतिवीर, सन्मति नायक हो | जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मति-दायक हो ||
ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय क्षुधारोग-विनाशनाय नैवेद्यं निर्वपामीति स्वाहा।५।

तम खंडित मंडित नेह, दीपक जोवत हूँ | तुम पदतर हे सुखगेह, भ्रमतम खोवत हूँ ||
श्री वीर महा-अतिवीर, सन्मति नायक हो | जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मति-दायक हो ||
ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय मोहांधकार-विनाशनाय दीपं निर्वपामीति स्वाहा।६।

हरिचंदन अगर कपूर, चूर सुगंध करा | तुम पदतर खेवत भूरि, आठों कर्म जरा ||
श्री वीर महा-अतिवीर, सन्मति नायक हो | जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मति-दायक हो ||
ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अष्टकर्म-दहनाय धूपं निर्वपामीति स्वाहा।७।

रितुफल कल-वर्जित लाय, कंचनथार भरूं | शिवफलहित हे जिनराय, तुम ढिंग भेंट धरूं ||
श्री वीर महा-अतिवीर, सन्मति नायक हो | जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मति-दायक हो ||
ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय मोक्षफलप्राप्तये फलं निर्वपामीति स्वाहा।८।

जल-फल वसु सजि हिम-थार, तन-मन मोद धरूं | गुण गाऊँ भवदधितार, पूजत पाप हरूं ||
श्री वीर महा-अतिवीर, सन्मति नायक हो | जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मति-दायक हो ||
ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।९।

पंचकल्याणक-अर्घ्यावली

मोहि राखो हो शरणा, श्री वर्द्धमान जिनरायजी, मोहि राखो हो शरणा |
गरभ साढ़-सित-छट्ठ लियो थिति, त्रिशला-उर अघहरना ||
सुरि-सुरपति तित सेव करी नित, मैं पूजूँ भवतरना |
नाथ! मोहि राखो हो शरणा, श्री वर्द्धमान जिनरायजी, मोहि राखो हो शरणा |
ओं ह्रीं अषाढ़शुक्ल-षष्ठ्यां गर्भमंगल-मंडिताय श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।१।

जनम चैत-सित-तेरस के दिन, कुंडलपुर कन वरना | सुरगिरि सुरगुरु पूज रचायो, मैं पूजूं भवहरना |
नाथ! मोहि राखो हो शरणा, श्री वर्द्धमान जिनरायजी, मोहि राखो हो शरणा |
ओं ह्रीं चैत्र-शुक्ल-त्रयोदश्यां जन्ममंगल-मंडिताय श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।२।

मगसिर असित मनोहर दशमी, ता दिन तप आचरना | नृप-कुमार घर पारन कीनों, मैं पूजूं तुम चरना |
नाथ! मोहि राखो हो शरणा, श्री वर्द्धमान जिनरायजी, मोहि राखो हो शरणा |
ओं ह्रीं मार्गशीर्षकृष्ण-दशम्यां तपोमंगल-मंडिताय श्री वर्द्धमानजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।३।

शुक्ल-दशैं-बैसाख दिवस अरि, घाति चतुक क्षय करना | केवल लहि भवि भवसर तारे, जजूं चरन सुखभरना |
नाथ! मोहि राखो हो शरणा, श्री वर्द्धमान जिनरायजी, मोहि राखो हो शरणा |
ओं ह्रीं वैशाखशुक्ल-दशम्यां केवलज्ञान-मंडिताय श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।४।

कार्तिक-श्याम-अमावस शिव-तिय, पावापुर तें वरना | गण-फनिवृन्द जजें तित बहुविध, मैं पूजूं भयहरना |
नाथ! मोहि राखो हो शरणा, श्री वर्द्धमान जिनरायजी, मोहि राखो हो शरणा |
ओं ह्रीं कार्तिककृष्ण-अमावस्यायां मोक्षमंगल-मंडितायअर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।५।

जयमाला

गणधर अशनिधर चक्रधर, हलधर गदाधर वरवदा | अरु चापधर विद्या-सु-धर, तिरशूलधर सेवहिं सदा ||
दु:खहरन आनंदभरन तारन, तरन चरन रसाल हैं | सुकुमाल गुन-मनिमाल उन्नत, भाल की जयमाल है ||
जय त्रिशलानंदन, हरिकृतवंदन, जगदानंदन चंदवरं | भवताप-निकंदन, तनकन-मंदन, रहित-सपंदन नयनधरं ||

जय केवलभानु-कला-सदनं, भवि-कोक-विकासन कंज-वनं | जगजीत महारिपु-मोहहरं, रजज्ञान-दृगांबर चूर करं ||१||
गर्भादिक-मंगल मंडित हो, दु:ख-दारिद को नित खंडित हो | जगमाँहिं तुम्हीं सतपंडित हो, तुम ही भवभाव-विहंडित हो ||२||
हरिवंश-सरोजन को रवि हो, बलवंत महंत तुम्हीं कवि हो | लहि केवलधर्म प्रकाश कियो, अब लों सोई मारग राजति हो ||३||
पुनि आप तने गुण माहिं सही, सुर मग्न रहें जितने सबही | तिनकी वनिता गुन गावत हैं, लय-ताननि सों मनभावत हैं ||४||
पुनि नाचत रंग उमंग भरी, तुव भक्ति विषै पग एम धरी | झननं झननं झननं झननं, सुर लेत तहाँ तननं तननं ||५||
घननं घननं घन-घंट बजे, दृम दृम दृम दृम मिरदंग सजे | गगनांगन-गर्भगता सुगता, ततता ततता अतता वितता ||६||
धृगतां धृगतां गति बाजत है, सुरताल रसाल जु छाजत है | सननं सननं सननं नभ में, इकरूप अनेक जु धारि भ्रमें ||७||
किन्नर-सुरि बीन बजावत हैं, तुमरो जस उज्ज्वल गावत हैं | करताल विषैं करताल धरें, सुरताल विशाल जु नाद करें ||८||
इन आदि अनेक उछाह भरी, सुर भक्ति करें प्रभुजी तुमरी | तुमही जगजीवन के पितु हो, तुमही बिन कारन तें हितु हो ||९||

तुमही सब विघ्न-विनाशन हो, तुमही निज-आनंद-भासन हो | तुमही चित-चिंतित दायक हो, जगमाँहिं तुम्हीं सब-लायक हो ||१०||
तुमरे पन-मंगल माँहिं सही, जिय उत्तम-पुन्य लियो सबही | हम तो तुमरी शरणागत हैं, तुमरे गुन में मन पागत है ||११||
प्रभु मो-हिय आप सदा बसिये, जबलों वसु-कर्म नहीं नसिये | तबलों तुम ध्यान हिये वरतों, तबलों श्रुत-चिंतन चित्त रतों ||१२||
तबलों व्रत-चारित चाहतु हों, तबलों शुभभाव सुगाहतु हों | तबलों सतसंगति नित्त रहो, तबलों मम संजम चित्त गहो ||१३||
जबलों नहिं नाश करों अरि को, शिव नारि वरों समता धरि को | यह द्यो तबलों हमको जिनजी, हम जाचतु हैं इतनी सुनजी ||१४||

(घत्ता छन्द)

श्रीवीर जिनेशा नमित-सुरेशा, नागनरेशा भगति-भरा | 'वृन्दावन' ध्यावें विघन-नशावें, वाँछित पावें शर्म वरा ||

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय जयमाला-पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।

(दोहा)

श्री सन्मति के जुगल-पद, जो पूजें धरि प्रीत | 'वृन्दावन' सो चतुर नर, लहे मुक्ति नवनीत ||

।।इत्याशीर्वादः पुष्पांजलिं क्षिपेत्।।

अर्घ्य

श्री आदिनाथ-जिन का अर्घ्य

शुचि निर्मल नीरं गंध सुअक्षत, पुष्प चरू ले मन हरषाय | दीप धूप फल अर्घ सु लेकर, नाचत ताल मृदंग बजाय ||
श्री आदिनाथजी के चरणकमल पर, बलिबलि जाऊँ मन-वच-काय | हो करुणानिधि भव-दु:ख मेटो, या तें मैं पूजूं प्रभु-पाँय ||

ओं ह्रीं श्री आदिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।१।

श्री चंद्रप्रभ जिन का अर्घ्य

सजि आठों-दरब पुनीत, आठों-अंग नमूं | पूजूं अष्टम-जिन मीत, अष्टम-अवनि गमूं ||
श्री चंद्रनाथ दुति-चंद, चरनन चंद लगे | मन-वच-तन जजत अमंद, आतम-जोति जगे ||

ओं ह्रीं श्रीचंद्रप्रभजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा ।१।

श्री शांतिनाथ जिन का अर्घ्य

जल-फलादि वसु द्रव्य संवारें, अर्घ चढ़ायें मंगल गाय| 'बखत रतन' के तुम ही साहिब, दीज्यो शिवपुर-राज कराय ||
शांतिनाथ पंचम-चक्रेश्वर, द्वादश-मदन तनो पद पाय | तिनके चरण-कमल के पूजे, रोग-शोक-दु:ख-दारिद जाय ||

ओं ह्रीं श्री शांतिनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।१।

श्री पार्श्वनाथ जिन का अर्घ्य

नीर गंध अक्षतान् पुष्प चारु लीजियै | दीप धूप श्रीफलादि अर्घ तें जजीजियै ||
पार्श्वनाथ देव सेव आपकी करूँ सदा | दीजिए निवास मोक्ष भूलिये नहीं कदा ||

ओं ह्रीं श्री पार्श्वनाथजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।१।

श्री महावीर-जिन का अर्घ्य

जल-फल वसु सजि हिम-थार, तन-मन मोद धरूं | गुण गाऊँ भवदधितार, पूजत पाप हरूं ||
श्री वीर महा-अतिवीर, सन्मति नायक हो | जय वर्द्धमान गुणधीर, सन्मति-दायक हो ||

ओं ह्रीं श्रीवर्द्धमानजिनेन्द्राय अनर्घ्यपद-प्राप्तये अर्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।१।

श्री वर्तमान समुच्चय चौबीसी जिन का अर्घ्य

जल-फल आठों शुचिसार, ताको अर्घ करूं | तुमको अरपूं भवतार, भव तरि मोक्ष वरूं ||
चौबीसों श्री जिनचंद, आनंद-कंद सही | पद-जजत हरत भवफंद, पावत मोक्ष मही ||

ओं ह्रीं श्री ऋषभादि-वीरांते चतुर-विंशति–तीर्थंकरेभ्यो अनर्घ्य पद-प्राप्तये अर्घ्यंनिर्वपामीति स्वाहा ।१।

समुच्चय महार्घ्य

मैं देव श्री अरिहन्त पूजूँ सिद्ध पूजूँ चाव सों |
आचार्य श्री उवझाय पूजूँ साधु पूजूँ भाव सों ||१||
अरिहन्त-भाषित बैन पूजूँ द्वादशांग रचे गणी |
पूजूँ दिगम्बर-गुरुचरण शिव-हेतु सब आशा हनी ||२||
सर्वज्ञ-भाषित धर्म-दशविधि दया-मय पूजूँ सदा |
जजुँ भावना-षोडश रत्नत्रय जा बिना शिव नहिं कदा ||३||
त्रैलौक्य के कृत्रिम-अकृत्रिम चैत्य-चैत्यालय जजूँ |
पण-मेरु नंदीश्वर-जिनालय खचर-सुर-पूजित भजूँ ||४||
कैलास श्री सम्मेद श्री गिरनार गिरि पूजूँ सदा |
चम्पापुरी पावापुरी पुनि और तीरथ सर्वदा ||५||
चौबीस श्री जिनराज पूजूँ बीस क्षेत्र विदेह के |
नामावली इक-सहस-वसु जपि होंय पति शिवगेह के ||६||

(दोहा)

जल गंधाक्षत पुष्प चरु, दीप धूप फल लाय |
सर्व पूज्य-पद पूजहूँ, बहुविधि-भक्ति बढ़ाय ||७||

ओं ह्रीं भावपूजा भाववंदना त्रिकालपूजा त्रिकालवंदना करें करावें भावना भावें श्रीअरिहंतजी सिद्धजी आचार्यजी उपाध्यायजी सर्वसाधुजी पंच-परमेष्ठिभ्यो नमः,
प्रथमानुयोग-करणानुयोग-चरणानुयोग-द्रव्यानुयोगेभ्यो नमः,
दर्शनविशुद्ध्यादि-षोडशकारणेभ्यो नमः,
उत्तमक्षमादि- दशलाक्षणिकधर्माय नमः,
सम्यग्दर्शन- सम्यग्ज्ञान-सम्यक्चारित्रेभ्यो नमः,
जल के विषै, थल के विषै, आकाश के विषै, गुफा के विषै, पहाड़ के विषै, नगर-नगरी विषै उर्ध्वलोक- मध्यलोक- पाताललोक विषै विराजमान कृत्रिम-अकृत्रिम जिन-चैत्यालय-जिनबिम्बेभ्यो नमः,

विदेहक्षेत्रे विहरमान बीस-तीर्थकरेभ्यो नमः,

पाँच भरत पाँच ऐरावत दशक्षेत्र-सम्बन्धि तीस चौबीसी के सातसौ बीस जिनराजेभ्यो नमः,

नन्दीश्वरद्वीप-सम्बन्धी बावन- जिनचैत्यालयस्थ- जिनबिम्बेभ्यो नमः,

पंचमेरुसम्बन्धि-अस्सी-जिनचैत्यालयस्थ जिनबिम्बेभ्यो नमः,

सम्मेदशिखर कैलाश चंपापुर पावापुर गिरनार सोनागिर मथुरा तारंगा आदि सिद्धक्षेत्रेभ्यो नमः,

जैनबद्री मूडबिद्री देवगढ़ चन्देरी पपौरा हस्तिनापुर अयोध्या राजगृही चमत्कारजी
श्रीमहावीरजी पद्मपुरी तिजारा बड़ागांव आदि अतिशयक्षेत्रेभ्यो नमः,

श्री चारणऋद्धिधारी सप्तपरमर्षिभ्यो नमः,

ओं ह्रीं श्रीमंतं भगवन्तं कृपावन्तं श्रीवृषभादि महावीरपर्यन्तं चतुर्विंशति-तीर्थंकरं-परमदेवं
आद्यानां आद्ये जम्बूद्वीपे भरतक्षेत्रे आर्यखंडे ..... नाम्नि नगरे मासानामुत्तमे
<.....शुभे....> मासे शुभे <.....शुभे....> पक्षे शुभ <.....शुभे....> तिथौ
<.....शुभे....> वासरे मुनि-आर्यिकानां श्रावक-श्राविकाणां स्वकीय
सकल-कर्म क्षयार्थं अनर्घ्यपद-प्राप्तये जलधारा सहित महार्घ्यं सम्पूर्णार्घ्यं निर्वपामीति स्वाहा।
(मास, पक्ष, दिन की जानकारी ना होने पर "शुभे" का प्रयोग करें)

शांति-पाठ

शास्त्रोक्त-विधि पूजा-महोत्सव सुरपती चक्री करें | हम सारिखे लघु-पुरुष कैसे यथाविधि पूजा करें ||
धन-क्रिया-ज्ञानरहित न जानें रीति-पूजन नाथ जी | हम भक्तिवश तुम चरण आगे जोड़ लीने हाथ जी ||१||
दु:खहरण मंगलकरण आशाभरण जिनपूजा सही | यो चित्त में श्रद्धान मेरे शक्ति है स्वयमेव ही ||
तुम सारिखे दातार पाए काज लघु जाचूँ कहा | मुझे आप सम कर लेहु स्वामी यही इक वाँछा महा ||२||
संसार भीषण-विपिन में वसुकर्म मिल आतापियो | तिस दाह तें आकुलित चित है शांति-थल कहुँ ना लह्यो ||
तुम मिले शांति-स्वरूप शांतिकरण-समरथ जगपति | **वसु-कर्म मेरे शांत कर दो** (3) शांतिमय पंचम गति ||३||
जबलों नहीं शिव लहूँ तबलों देहु यह धन पावना | सत्संग शुद्धाचरण श्रुत-अभ्यास आतम-भावना ||
तुम बिन अनंतानंत-काल गयो रुलत जगजाल में | अब शरण आयो नाथ दोऊ कर जोड़ नावत भाल मैं ||४||

(दोहा)

कर-प्रमाण के मान तें गगन नपे किहिं भंत | त्यों तुम गुण-वर्णन करत कवि पावे नहिं अंत ||

(कायोत्सर्गपूर्वक नौ बार णमोकार-मंत्र जपना चाहिये।)

विसर्जन-पाठ

सम्पूर्ण-विधि कर वीनऊँ इस परम पूजन ठाठ में | अज्ञानवश शास्त्रोक्त-विधि तें चूक कीनी पाठ में ||
सो होहु पूर्ण समस्त विधिवत् तुम चरण की शरण तें | वंदूं तुम्हें कर जोड़ि, कर उद्धार जामन-मरण तें ||१||
आह्वाननं स्थापनं सन्निधिकरण विधान जी | पूजन-विसर्जन यथाविधि जानूँ नहीं गुणखान जी ||
जो दोष लागौ सो नसे सब तुम चरण की शरण तें | वंदूं तुम्हें कर जोड़ि, कर उद्धार जामन-मरण तें ||२||
तुम रहित आवागमन आह्वानन कियो निजभाव में | विधि यथाक्रम निजशक्ति-सम पूजन कियो अतिचाव में||
करहूँ विसर्जन भाव ही में तुम चरण की शरण तें | वंदूं तुम्हें कर जोड़ि कर उद्धार जामन-मरण तें ||३||

(दोहा)

तीन भुवन तिहूँ काल में, तुम-सा देव न और | सुखकारण संकटहरण, नमौं जुगल-कर जोर ||
श्री जिनवर की आसिका, लेऊँ शीश चढ़ाय | भव-भवके पातक कटें, दु:ख दूर हो जाय ||

।। इत्याशीर्वाद: पुष्पांजलिं क्षिपेत् ।।

स्तुति (प्रभु पतित पावन)

प्रभु पतित-पावन मैं अपावन, चरण आयो सरन जी |
यो विरद आप निहार स्वामी, मेटो जामन मरन जी ||१||
तुम ना पिछान्या आन मान्या, देव विविध प्रकार जी |
या बुद्धि सेती निज न जान्यो, भ्रम गिन्या हितकार जी ||२||
भव-विकट-वन में कर्म-वैरी, ज्ञानधन मेरो हर्यो |
सब इष्ट भूल्यो भ्रष्ट होय, अनिष्ट-गति धरतो फिर्यो ||३||
धन घड़ी यो धन दिवस यो ही, धन जनम मेरो भयो |
अब भाग मेरो उदय आयो, दरश प्रभु को लख लयो
छवि वीतरागी नग्न मुद्रा, दृष्टि नासा पे धरे |
वसु प्रातिहार्य अनंत गुणजुत, कोटि रवि छवि को हरें ||५||
मिट गयो तिमिर मिथ्यात्व मेरो, उदय रवि आतम भयो |
मो उर हरष ऐसो भयो, मनु रंक चिंतामणि लह्यो ||६||
मैं हाथ जोड़ नवाय मस्तक, वीनऊँ तुव चरन जी |
सर्वोत्कृष्ट त्रिलोकपति जिन, सुनहु तारण तरण जी ||७||
जाचूँ नहीं सुर-वास पुनि, नर-राज परिजन साथ जी |
'बुध' जाचहूँ तुव भक्ति भव भव, दीजिए शिवनाथजी ||८||

स्तुति : मैं तुम चरण-कमल गुण गाय

(चौपाई छन्द)

मैं तुम चरण-कमल गुणगाय, बहुविधि-भक्ति करूं मनलाय |
जनम-जनम प्रभु पाऊँ तोहि, यह सेवाफल दीजे मोहि ||१||
कृपा तिहारी ऐसी होय, जामन-मरन मिटावो मोय |
बार-बार मैं विनती करूँ, तुम सेयां भवसागर तरूँ ||२||
नाम लेत सब दु:ख मिट जाय, तुम दर्शन देख्यो प्रभु आय |
तुम हो प्रभु देवनि के देव, मैं तो करूँ चरण की सेव ||३||
जिन-पूजा तें सब सुख होय, जिन-पूजा-सम अवर न कोय |
जिन-पूजा तें स्वर्ग-विमान, अनुक्रम तें पावें निर्वाण ||४||
मैं आयो पूजन के काज, मेरो जन्म सफल भयो आज |
पूजा करके नवाऊँ शीश, मुझ अपराध क्षमहु जगदीश ||५||

(दोहा छन्द)

सुख देना दु:ख मेटना, यही तुम्हारी बान |मो गरीब की वीनती, सुन लीजो भगवान ||१||
दर्शन करते देव के, आदि मध्य अवसान |सुरगनि के सुख भोगकर, पाऊँ मोक्ष निधान ||२||
जैसी महिमा तुम-विषै, और धरे नहिं कोय |जो सूरज में ज्योति है, नहिं तारागण सोय ||३||
नाथ तिहारे नाम तें, अघ छिनमाँहि पलाय |ज्यों दिनकर-परकाश तें, अंधकार विनशाय ||४||
बहुत प्रशंसा क्या करूँ, मैं प्रभु बहुत अजान | पूजाविधि जानूँ नहीं, शरन राखो भगवान् ||५||

आरती श्री पार्श्वनाथ जी

ओं जय पारस देवा स्वामी जय पारस देवा ! सुर नर मुनिजन तुम चरणन की करते नित सेवा |
पौष वदी ग्यारस काशी में आनंद अतिभारी, अश्वसेन वामा माता उर लीनो अवतारी | ओं जय..
श्यामवरण नवहस्त काय पग उरग लखन सोहें, सुरकृत अति अनुपम पा भूषण सबका मन मोहें | ओं जय..
जलते देख नाग नागिन को मंत्र नवकार दिया, हरा कमठ का मान, ज्ञान का भानु प्रकाश किया | ओं जय..
मात पिता तुम स्वामी मेरे, आस करूँ किसकी, तुम बिन दाता और न कोई, शरण गहूँ जिसकी | ओं जय..
तुम परमातम तुम अध्यातम तुम अंतर्यामी, स्वर्ग-मोक्ष के दाता तुम हो, त्रिभुवन के स्वामी | ओं जय..
दीनबंधु दु:खहरण जिनेश्वर, तुम ही हो मेरे, दो शिवधाम को वास दास, हम द्वार खड़े तेरे | ओं जय..
विपद-विकार मिटाओ मन का, अर्ज सुनो दाता, सेवक द्वै-कर जोड़ प्रभु के, चरणों चित लाता | ओं जय..

आरती श्री वर्द्धमान स्वामी

करू आरती वर्द्धमान की, पावापुर निरवान थान की |
राग बिना सब जगजन तारे, द्वेष बिना सब कर्म विदारे |
शील धुरंधर शिव तिय भोगी, मन वच कायनि कहिये योगी | करू..
रत्नत्रय निधि, परिग्रह-हारी, ज्ञानसुधा-भोजनव्रतधारी | करू..
लोकालोक व्यापे निजमाँहीं, सुखमय इंद्रिय सुख दु:ख नाहीं | करू..
पंचकल्याणक पूज्य विरागी, विमल दिगंबर अंबर त्यागी | करू..
गुनमणि भूषण भूषित स्वामी, जगत् उदास जगंतर नामी | करू..
कहें कहाँ लों तुम सब जानो, 'द्यानत' की अभिलाष प्रमाणो | करू..

तुभ्यं नमस्त्रिभुवनार्ति-हराय नाथ!तुभ्यं नम: क्षिति-तलामल-भूषणाय |
तुभ्यं नमस्त्रिजगत: परमेश्वराय,तुभ्यं नमो जिन! भवोदधि-शोषणाय ||२६||